अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-41, अंक-05, 16-31 अक्टूबर, 2017

चलें गांव की ओर...

"अगर कोई देश अपनी बुनियादी जरूरतें - खाना, कपड़ा और मकान खुद नहीं पूरी करता, तो उसे आजाद नहीं कहा जा सकता। हमारी खेती-अर्थनीति एक ऐसी चीज है, जो हमें अपने पांव पर खड़ा कर दे सकती है। हमारा देश हमेशा से खेतिहर देश रहा है और जो भी उद्योग-धंधे यहां चलते थे, वे खेती से मिले-जुले होते थे।"

- जे. सी. कुमारप्पा

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 41, अंक : 05, 16-31 अक्टूबर, 2017

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
मो. : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर 'कुसुम'**

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. किसान आंदोलन व्यापक संदर्भ समझें... 2
2. अहिंसा की ताकत... 3
3. एक बनो, नेक बनो... 5
4. खेती-अर्थनीति और गांव-सुधार... 7
5. कोई भी राजनीतिक पार्टी किसान के... 10
6. भारतीय कृषि : समस्या और... 14
7. किसानों की समस्याओं के समाधान... 16
8. उपन्यास : 'बा'... 17
9. गतिविधियां और समाचार... 19
10. कविता... 20

प्रधान संपादक की कलम से...

किसान आंदोलन व्यापक संदर्भ समझें

भारत में एक बार फिर देश भर के किसान मुखर होकर विरोध प्रदर्शन कर रहे हैं। सरकार की नीतियों से नाराजगी है और कृषि की गिरती हुई स्थिति से परेशानी है।

भारत की आजादी के बाद 'विकास' के नाम पर बड़ी संख्या में आदिवासियों को बेदखल किया गया। वे 'आधुनिक' पैमाने से विकसित तो नहीं थे, किन्तु अपने सामाजिक-आर्थिक जीवन में स्वायत्त, स्वावलंबी और स्वतंत्र थे। आधुनिक विकास ने उनकी कुर्बानी ली। उन्हें मिला तो कुछ नहीं। हां, उन्होंने अपनी स्वायत्तता, स्वतंत्रता और स्वावलंबन जरूर खो दिया। और, बाद में एक पूरी सांस्कृतिक पहचान को नष्ट कर, आर्थिक संसाधनों से बेदखल कर, राहत के पैकेज देने का पाखंड शुरू हुआ। प्रकृति के जिन स्रोतों व संसाधनों पर सदियों से उनका जुड़ाव था, जिन पर उनका स्वाभाविक अधिकार था, उन स्रोतों व साधनों की जरूरत 'विकास' को थी, इसलिए वे विकास से वंचित कर दिये गये। और उन स्रोतों व संसाधनों से बेदखल कर दिये गये जिन पर उनका सदियों से स्वाभाविक अधिकार था। राजसत्ता और उसके कानून एक बड़ी जनसंख्या को बेदखल व वंचित करने का माध्यम बने। इस पूर्णतः अनैतिक, अमानवीय एवं संगठित हिंसा को 'विकास' के नाम पर जायज ठहराया गया।

आज स्थिति यह है कि 'विकास' के इस प्रथम चरण में कृषि-भूमि को छोड़कर प्रकृति प्रदत्त सभी स्रोत एवं संसाधन, पूंजीवादी बाजार के दायरे में एवं उसके नियंत्रण में आ गये हैं। राजसत्ता ने अपने संगठित हिंसा के बल पर 'कानून' बनाकर इसे अंजाम दिया है।

अब 'विकास' का दूसरा चरण शुरू हो रहा है। इस दौर में कृषि एवं कृषि भूमि को पूंजीवादी बाजार के नियंत्रण में पूर्णतः लाना है। इसके लिए तीन स्तरों पर परिवर्तन को बढ़ावा दिया जा रहा है।

एक, कृषि की स्वायत्तता एवं स्वावलंबन को खत्म करने की दिशा में परिवर्तन। उदाहरण के लिए मिट्टी और बीज का गहरा संबंध रहा है। इसी कारण लगभग हर 10 मील पर खेत में बोये जाने वाले बीज थोड़ा भिन्न होते थे। हर फसल के देश भर में हजारों प्रकार के बीज हुआ करते थे। उन बीजों से जो फसल होती थी, उससे ही अगले वर्ष के लिए बीज बचाकर रख लिये जाते थे। अब यह किया जा रहा है कि सारी तरह की जमीनों के लिए एक ही प्रकार का बीज तथा इस बीज से आप अगले वर्ष के लिए बीज नहीं बचा पायेंगे। किसान को हर वर्ष बाजार से बीज खरीदना होगा और इस बीज के बाजार पर बहुराष्ट्रीय निगमों का नियंत्रण है। जी. एम. सीड्स (वे बीज जिनके जीन की संरचना में परिवर्तन कर दिया गया हो) से पैदा हुई फसल के उपभोग से मनुष्य के जीन की संरचना पर क्या प्रभाव आयेगा ये जाने बिना ही इसको बढ़ावा दिया जा रहा है। हाल के एक अध्ययन से पता चला है कि अस्पतालों में बी. टी. काटन के बजाय देशी काटन की मांग हो रही है। बीज के अलावा उर्वरक, कीटनाशक, कृषि यंत्र सभी पर पूंजीवादी बाजार का नियंत्रण बढ़ा है।

दूसरा परिवर्तन यह हुआ है कि कृषि की कीमतों एवं गांव में काम करने वाले श्रम की मजदूरी को न्यूनतम स्तर पर रखा जाये। कृषि को घाटे का सौदा बनाने के बाद यह आसान हो जायेगा कि किसान को मुआवजे के जाल में फंसाकर उसकी जमीन का अधिग्रहण कर लिया जाये।

तीसरा परिवर्तन आगे आने वाला है। पहले कन्ट्रैक्ट खेती के नाम पर किसानों को उस दिशा में धकेला जायेगा, जिसमें वे अपने उपज को बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों बेचने का कन्ट्रैक्ट कर लें। किसानों को यह कह कर लुभाया जायेगा कि बहुराष्ट्रीय निगम आपको ऋण उपलब्ध करा देंगे, खेत बनाने में मदद करेंगे और इनपुट मुहैय्या करा देंगे, और दूसरी ओर आपके खेत से ही अच्छी कीमत पर फसल ले जायेंगे। आप इनके भंडारण से, बिचौलियों से और इनके ट्रान्सपोर्टेशन के झंझट से बच जायेंगे। एक बार ये काम हो जाते हैं, तो अगला कदम कारपोरेट फार्म्स के विकास का होगा। आदिवासियों के बाद अब किसानों को इस 'विकास' के नाम पर खत्म करने का अभियान शुरू हो गया है। जल-जंगल-जमीन व खनिज से जुड़े समुदायों को एकजुट होकर इस पूंजीवादी विकास का निषेध करना होगा।

बिमल कुमार

अहिंसा की ताकत

❑ महात्मा गांधी

अहिंसा बहुत अधिक धैर्य की अपेक्षा रखती है। इसमें विफलता ऊपरी ही होती है। चूंकि लक्ष्य और साधन दोनों शुद्ध हैं, इसलिए विफलता मिल ही नहीं सकती। मुझसे मुलाकात में वाइसराय महोदय ने ब्रिटिश-नीति के प्रतिपादन में साफगोई से काम लिया, तो मैंने भी कांग्रेस की नीति बिना किसी लाग-लपेट के सामने रख दी। हमें दुनिया को बताना है कि हम क्या चाहते हैं। भारत अनेक उपनिवेश-राष्ट्रों में से एक नहीं हो सकता—अर्थात् वह गैर-जातियों के शोषण में इंग्लैंड का साझेदार नहीं बन सकता। अगर उसका संघर्ष अहिंसक है तो उसे अपना दामन बेदाग रखना है। इसलिए हमारा कर्तव्य तो यह है कि हम अपनी शक्ति का अहसास करायें। यह काम हम सविनय अवज्ञा करके नहीं, बल्कि स्वयं अपने दोषों को दूर करके करेंगे। ब्रिटिश सरकार अल्पसंख्यकों की समस्या या ऐसे ही किसी दूसरे प्रश्न की आड़ में सही कदम उठाने से इनकार करे, यह बात हम भले ही न बरदाश्त करें, लेकिन इस सच्चाई की ओर से अपनी आंखें हम बंद भी तो नहीं कर सकते कि ये प्रश्न मौजूद हैं और हमारे लिए इसका हल ढूंढ़ना जरूरी है। कायदे-आजम जिन्ना ने जो दुराग्रहपूर्ण और सर्वथा राष्ट्र-विरोधी स्थिति अपनायी है, उसकी ओर हम भले ही ध्यान न दें, लेकिन मुसलमानों की भावना का ख्याल तो हमें करना ही होगा।

अकेला सत्याग्रही अपने अंतर की जांच करे, और उसे यदि यह विश्वास हो जाये कि उसमें विश्व-प्रेम है तथा सत्याग्रही के अन्य लक्षण भी उसमें नजर आते हों तो यह प्रेम उसके दैनिक जीवन में प्रकट होगा। उसने अपने गांव में निर्धनतम से लेकर सबके साथ सेवा के संबंध बना लिये होंगे। उसने अपने-आपको गांव का भंगी बना लिया होगा, वह बीमारों की देखभाल करता होगा, गांव के झगड़े निबटाता होगा, गांव के बच्चों को पढ़ाता होगा, उसे सब पहचानते होंगे, वह गृहस्थ होकर भी संयम से रहता होगा। अपने और पड़ोसी के लड़के में भेद नहीं रखता होगा। यदि उसके पास धन होगा तो वह खुद को उसका मालिक न मानकर, वह धन लोगों का है और वह खुद रक्षक-मात्र है, ऐसा मानकर अपनी जरूरत-भर के लिए उसमें से लेता होगा, जहां तक बने अपनी जरूरतें गरीबों-जैसी ही रखता होगा, उसके जीवन में जात-पांत और छुआछूत का भेद नहीं होगा, और सब जातियों तथा सब धर्मों के लोग उसके इस गुण से परिचित होंगे। उसे चाहिए कि इसमें से जो गुण उसमें न हों, उसकी पूर्ति करे, जो ज्ञान न हो वह ज्ञान प्राप्त कर, अपना एक क्षण भी व्यर्थ न जाने दे। उसके यहां चरखा नित्य चलना चाहिए और उसका कुटुम्ब सुव्यवस्थित होना चाहिए। ऐसा एक ही सत्याग्रही अपने गांव की रक्षा कर सकेगा। बाकी लोग सत्याग्रही न हों, फिर भी मौका आने पर वे ऐसा आचरण करेंगे मानो वे उसकी सेना के सदस्य हैं। लेकिन वे ऐसा आचरण करें अथवा न करें, भीतर या बाहर से आक्रमण होने पर वह अकेला सत्याग्रही उसका अहिंसात्मक ढंग से निवारण करेगा, अथवा वैसा करते हुए अपने को होम कर देगा।

ऐसा सत्याग्रही सदा अकेला रह ही नहीं सकता। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि अन्य कुछ लोग उसके जैसे हुए बिना रह ही नहीं सकते। मैंने जो शर्तें और लक्षण अकेले सत्याग्रही में ऊपर गिनाये हैं, और अन्य लक्षण जिन्हें मैं आवश्यक मानता हूं वे सब मुझमें हैं, ऐसा दावा मैं नहीं करता। फिर भी अगर उन सब पर अमल करने की मेरी तैयारी न हो और उनमें से अधिकांश को मैं न्यूनाधिक प्रमाण में अपने आचरण में न उतारता होऊं तो मैंने ऊपर जो-कुछ लिखा है, वह मैं लिख ही नहीं पाता। *मेरी वर्तमान अभिलाषा यह अवश्य है कि सेवाग्राम एक आदर्श ग्राम बने। मैं जानता हूं कि यह काम उतना ही कठिन है जितना पूरे हिन्दुस्तान को आदर्श बनाने का काम। केवल सेवाग्राम को कोई मनुष्य कभी-न-कभी आदर्श बना भी सकता है लेकिन समूचे हिन्दुस्तान को आदर्श बना सकने लायक एक मनुष्य की आयु ही नहीं होती, तथापि अगर केवल एक ही गांव को कोई एक आदमी आदर्श बना सके, तो उसके बारे में कहा जा सकता है कि उसने समूचे हिन्दुस्तान के लिए ही नहीं, बल्कि समस्त संसार के लिए मार्ग खोज निकाला है। साधक को इसके आगे जाने का लोभ नहीं करना चाहिए।*

इसे आरंभ करने की सामर्थ्य तो केवल उन्हीं में है जो उसके लिए काम करते हैं। सच्ची सविनय अवज्ञा की दृष्टि से ऐसे आंदोलन में भाग लेने वालों के लिए यह जरूरी है कि उन्हें जो करने का आदेश दिया जाये उसे करें और जो करने का निषेध किया जाये उसे न करें। एक चोर मेरे घर में घुस आया है और उसने मुझे अपने ही घर से बाहर निकाल दिया है। मुझे उससे लड़कर अपना घर वापस लेना है, लेकिन वैसा करने से पहले मुझे उसके लिए पूरी तरह तैयार हो

जाना चाहिए। मेरे कोश में 'पराजय' शब्द नहीं है, और मेरी सेना में भरती किया जाने वाला हर आदमी इस बात के लिए आश्वस्त रहे कि सत्याग्रही कभी पराजित नहीं होता।

अपने दिल और दिमाग को शुद्ध कीजिए। मेरे लिए तो अहिंसा के अलावा कोई और रास्ता ही नहीं है। बेशक मेरी मृत्यु के समय भी मेरे अधरों पर अहिंसा का नाम होगा। लेकिन आप मेरी तरह इसे प्रतिबद्ध नहीं हैं, और इसलिए आपको कोई दूसरा कार्यक्रम अपनाकर, देश को स्वतंत्र करने की पूरी छूट है। लेकिन अगर आप न तो यह करना चाहें और न चरखा चलायें और यह इच्छा करें कि मैं लड़ाई आरंभ कर दूं तो यह तो बड़ी कठिन स्थिति होगी। अगर आपको लगता हो कि आपको लड़ना है और अभी तुरंत लड़ना है और यदि आपको विश्वास हो कि उस लड़ाई को जीतने का कोई और रास्ता भी है तो मैं आपसे कहूंगा कि आप आगे बढ़िये और अगर आप विजयी हुए तो आपको शाबाशी देने वालों में मैं सबसे आगे होऊंगा। लेकिन अगर आप मुझे छोड़ना नहीं चाहते और साथ ही मेरे रास्ते पर चलना और मेरे निर्देशों का पालन करना भी नहीं चाहते ता मैं जानना चाहूंगा कि आप मुझसे किस प्रकार के सेनापतित्व की अपेक्षा रखते हैं।

जो लोग यह रट लगाये हैं कि सविनय अवज्ञा अविलंब आरंभ की जाये, वे चाहते हैं कि मैं उनका साथ दूं। क्यों? इसलिए कि वे जानते हैं कि जनसाधारण मेरे साथ है। मैं निःसंकोच कहता हूं कि मैं आम जनता का आदमी हूं। हर क्षण मैं करोड़ों क्षुधार्थ लोगों के लिए दुःख का अनुभव करता हूं। उनके कष्ट दूर करने और उनकी तकलीफों को कम करने के लिए ही मैं जीवित हूं और इसी के लिए मैं अपने प्राण भी दे देने को तैयार हूं। मैं दावा करता हूं कि उन करोड़ों लोगों पर मेरा कुछ प्रभाव है, क्योंकि मैं उनका निष्ठावान् सेवक रहा हूं। मैं सबसे अधिक वफादार उन्हीं के प्रति हूं, और आप मेरा साथ छोड़ दें या मुझे मार डालें तब भी अगर मैं चरखे को छोड़ने के लिए तैयार नहीं हूं तो उन्हीं की खातिर नहीं हूं। कारण, मैं जानता हूं कि अगर मैं रक्षा-संबंधी शर्त में ढील दे दूं तो उन करोड़ों मूक लोगों के विनाश का सामान जुटा दूंगा जिनके लिए मुझे ईश्वर के दरबार में जवाब देना होगा। इसलिए अगर आप उस अर्थ में चरखे में विश्वास नहीं करते जिस अर्थ में कि मैं करता हूं तो आपसे मेरा निवेदन है कि आप मुझे छोड़ दें। आप मुझपर पत्थर बरसायें और मुझे मार डालें तब भी मैं जनसाधारण के लिए काम करने की अपनी लगन नहीं छोड़ूंगा। यह है मेरा रास्ता! अगर आप समझते हों कि कोई और रास्ता भी है तो मुझे अकेला छोड़ दें।

अगर आप किसी डॉक्टर की दवा उनकी हिदायतों के अनुसार लेने को तैयार नहीं हैं तो उससे कोई दवा बताने को कहना बेकार है। ऐसी बात हो तो मैं तो यही कहूंगा कि आप अपने रोग के इलाज के लिए कोई और डॉक्टर ढूंढ़ लें। आज आपने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ जितने प्रवचन सुने हैं वे सब आपको उससे छुटकारा पाने में मदद नहीं देंगे। उनसे सिर्फ आपका क्रोध ही भड़केगा। इससे समस्या हल नहीं होगी। क्रोध सत्याग्रह के प्रतिकूल है।

एक पत्र की ध्वनि यह है कि अहिंसा का समाजव्यापी विस्तार असंभव है और ऐसा नहीं लगता कि उसका अनुसरण करके समाज ने कोई प्रगति की हो। बुद्ध जैसे सुधारक आये, उन्होंने कुछ प्रयास किया। अपने जीवन-काल में उन्हें थोड़ी-बहुत सफलता भले मिली हो, लेकिन समाज तो जहां था वहीं आज भी खड़ा है। अहिंसा व्यक्तिगत धर्म हो सकती है, लेकिन समाज के लिए वह निरर्थक है, और हिन्दुस्तान को भी अपनी मुक्ति के लिए हिंसा का मार्ग ही अपनाना पड़ेगा।

मैं एक साधारण व्यक्ति हूं। मेरे प्रभाव में पड़कर समाज ने कुछ किया है, लेकिन मेरे बाद वह सब विलुप्त हो जायेगा—यह कहना ठीक नहीं माना जा सकता।

ज्ञात इतिहास के आरंभ से लेकर आज तक के काल पर यदि हम दृष्टिपात करें, तो हम देखते हैं कि *मनुष्य अहिंसा के मार्ग पर ही चला आ रहा है। हमारे पूर्वज एक-दूसरे को खा जाते थे। बाद में वे शिकार पर गुजारा करने लगे। एक-दूसरे को खाने से उन्हें घृणा होने लगी। इसके बाद केवल शिकार के सहारे जीवन बिताने में शर्म आने लगी, इसलिए आदमी ने खेती शुरू की। वह उससे अनेक प्रकार के भोजन प्राप्त करने लगा। जंगल में मंगल करने लगा। घुमक्कड़ जिन्दगी के बदले उसने स्थिर होकर एक जगह रहना पसंद किया। उसने गांव और शहर बसाये। कौटुम्बिक भावना जागी, जो आगे चलकर सामाजिक हो गयी। ये सब उत्तरोत्तर बढ़ती अहिंसा के ही चिह्न हैं।* हिंसा-वृत्ति कम होती गयी। यदि ऐसा न हुआ होता तो आज मनुष्य-जाति उसी प्रकार समाप्त हो गयी होती जिस प्रकार निम्न प्राणियों की बहुत-सी जातियां नष्ट हो गयी हैं। *अनेक पैगम्बर और अवतार हो गये हैं। उन्होंने भी न्यूनाधिक प्रमाण में अहिंसा का ही प्रवर्तन किया। किसी ने हिंसा का प्रवर्तन करने का दावा ही नहीं किया। करते भी कैसे? हिंसा का प्रवर्तन करने की जरूरत ही नहीं है। पशु के रूप में मनुष्य हिंसक ही है, आत्मा के रूप में ही अहिंसक है। आत्मा का भान होने पर वह हिंसक रह ही नहीं सकता। वह या तो अहिंसा सीखेगा या नष्ट हो जायेगा।* यदि हम इतना मान लें कि आजकल अहिंसा उत्तरोत्तर बढ़ती आयी है, तो हम यह मानने को भी सहज ही बाध्य हो जाते हैं कि उसे आगे भी बढ़ना ही है। इस संसार में कुछ भी स्थिर नहीं है। सब गतिमान् है। यदि प्रगति नहीं हुई तो पिछड़ना ही पड़ेगा। गति-चक्र के बाहर तो कोई जा ही नहीं सकता। उसके बाहर तो बस एक ईश्वर है—सो भी अगर हो तो! यह तो मैं देखता रहता हूं कि लोगों में अहिंसा के प्रति जितना सम्मान आज है उतना कभी नहीं था। ❑

एक बनो, नेक बनो

❑ विनोबा

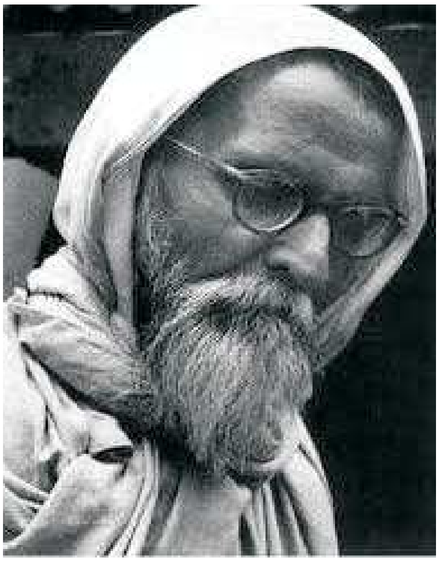

दो दृष्टियां

जब इन्सान ऊपर देखता है तो उसके दिल में हसद, जलन, ईर्ष्या पैदा होती है। लखपति करोड़पति की तरफ देखता है तो दुःखी होता है। वह सोचता है कि मेरे पास तो सिर्फ लाख ही रुपये हैं, दूसरे के पास करोड़ रुपये हैं। वह कितना खुशहाल है। इस तरह वह अपने को कमजोर पाता है और उसके मन में दहशत पैदा होती है। जो शख्स नीचे की तरफ देखता है, उसे दुःखी जमात दिखायी देती है। वह देखता है कि लोग कितने गरीब हैं, गये-बीते हैं। उनकी फिक्र करने वाला कोई नहीं है तो वह समझता है कि इनसे मैं बहुत खुशहाल हूं। मुझे पचास रुपये मिल रहे हैं। दुनिया में कई लोग ऐसे हैं, जिन्हें कुछ भी नहीं मिलता है। यों सोचकर वह अपने पचास रुपये में से पांच रुपये खैरात के लिए निकालता है। इस तरह नीचे देखने से पचास रुपये वाले के दिल में हमदर्दी, रहम पैदा होता है और ऊपर देखने से पांच लाख पाने वाला भी दुखी होता है।

पहाड़ पर पानी गिरता है तो नीचे की तरफ जाता है। कहीं भी लोटाभर पानी डाला जाय तो वह नीचे की तरफ ही दौड़ता है। पानी की यह सिफत हमें लेनी चाहिए। हमें भी समाज में जो सबसे दुखी हैं, गरीब हैं, उनकी मदद में दौड़ना चाहिए। इसी में इन्सानियत है। अगर ऊपर देखा करोगे तो दिल में खयाल आयेगा कि हमें और ज्यादा मिलना चाहिए। इस तरह हविस बढ़ाते जाना इन्सानियत नहीं है। यह तो इन्सान के जिस्म में छिपी हुई हैवानियत है, पशुता है।

खिलाकर खाना ही इन्सानियत : घर में खाना भरा हुआ होने पर भी इन्सान फाका करता है, रोजा रखता है, यही उसकी इन्सानियत है। *इन्सान को अपनी इन्द्रियों पर जब्त रखना चाहिए। उसे सोचना चाहिए कि मैं दुःखी हूं, लेकिन मुझसे भी कोई ज्यादा दुःखी है। उसकी तलाश में मुझे जाना चाहिए और उसे ढूंढ़कर उसकी मदद करनी चाहिए। इन्सान के लिए यही जीनत है, शौकत है, शान है कि दूसरे को खिलाकर खाये, पिलाकर पिये।* इन्सान को सोचना चाहिए कि पहले दूसरे को मिले, फिर मुझे मिले। पहले दूसरों को खाना मिले, फिर मुझे मिले। घर में मां की इज्जत सबसे ज्यादा है, क्योंकि वह सबको खिलाकर, खायेगी, पिलाकर पीयेगी, सुलाकर सोयेगी। अगर मां बच्चे से कहे कि 'बेटा, घर में एक ही पाव दूध है। मैं कमजोर हो जाऊंगी तो तेरी खिदमत कैसे कर पाऊंगी, इसलिए उस दूध पर पहला हक मेरा है। मैं पहले दूध पीऊंगी और फिर बचेगा तो तू पी सकेगा', तो उसकी इज्जत नहीं रहेगी। लेकिन मां कहती है कि 'बेटा, दूध थोड़ा है, तू पहले पी ले।' इन्सानियत इसी में है कि हम यह देखें कि अपने से भी ज्यादा गिरी हुई हालत में कोई शख्स है, तो उसकी तलाश की जाय और उसकी खिदमत की जाय। *कोई शख्स यह नहीं कह सकता है कि मैं दुनिया में सबसे ज्यादा दुखी हूं। यह अल्लाह की कुदरत है कि यहां एक-से-एक बढ़कर ऊंचे और नीचे लोग हैं। इसलिए जो गिरी हुई हालत में है, वह भी पायेगा कि कोई मुझसे भी गरीब है, तो मुझे उसकी इमदाद करनी चाहिए। दुखियों की मदद करना दुखी का भी काम है।*

कुएं से आप एक बाल्टीभर पानी निकाल लेते हैं, तो कुएं में बाल्टी की शक्ल का गड्ढा नहीं पड़ता है, क्योंकि पानी की बूंदों में इतनी हमदर्दी है कि जहां आपने पानी निकाला, वहां चारों तरफ से पानी की बूंदे गड्ढा भरने के लिए दौड़ती हैं और गड्ढे को पाट देती हैं। लेकिन गेहूं के ढेर में आप एक सेर गेहूं निकाल लीजिये, तो यह नजारा दीखता है कि उसमें एक गड्ढा पड़ता है। गेहूं इतने बेवकूफ और खुदगर्ज होते हैं कि ऐसे ही बैठे रहते हैं। गड्ढा भरने के लिए दौड़ते नहीं। लेकिन कुछ महात्मा गेहूं गड्ढे की तरफ दौड़े जाते हैं। *पानी की बूंदों से हमें सबक सीखना चाहिए। बाबा की यह मांग है कि चाहे आप खुशहाल हों या दुखी, आपको कुछ-न-कुछ देना चाहिए। देने की फिजा पैदा करनी है। देना इन्सान का फर्ज है, यह समझकर देना चाहिए।* आप अपने दो हाथों से देते चले जाइये तो हजार हाथों से पाइयेगा। देने में बड़ा लुत्फ आयेगा। देने का सौदा बड़ा फायरेमंद है।

दया से ही संतोष : प्यासे को पानी पिलाने वाले को प्यासे से ज्यादा तसल्ली मिलती है, क्योंकि इसमें इन्सानियत है। *अल्लाह ने इन्सान को सबसे बड़ी जो चीज बख्शी है, वह है इन्सानियत। उसी को हम रहम, हमदर्दी या करुणा कहते हैं। यह चीज जितनी जिस शख्स में होगी, उतनी ही उसकी जिन्दगी में, अंतःकरण में इतमीनान होगा, सुकून होगा। उतनी ही उसे शांति मिलेगी।*

कुरानशरीफ में आया है कि 'तुम रोजा रखो।' किसी वजह से रोजा नहीं रख सके तो क्या उसके लिए भी कोई उपाय है, इलाज है? हां, कुरानशरीफ ही बताता है कि 'रोजा नहीं रख सकते तो गरीबों को खिलाओ।' मानी यह हुआ कि भले मानुष! तू रोजा नहीं रख सकता तो मत रख, लेकिन भूखे की तकलीफ समझ ले, गरीब की तकलीफ समझ ले। *जो भूखा है, उसे पहले खिला! यह पहला फर्ज है। जो यह नहीं करता, वह कुछ भी नहीं जानता। उसे धर्म छुआ ही नहीं है।* फिर वह चाहे कितनी ही लंबी-चौड़ी किताबें

पढ़ता हो, पूजा-इबादत करता हो, लेकिन तंग-दिल है तो उस शख्स में यह सब होने पर भी इन्सानियत नहीं है। उसमें इल्म हो, वह बड़ा आलिम हो, लेकिन हमदर्दी न हो, तो इन्सानियत भी नहीं है। फिर जिस इन्सान में इन्सानियत नहीं है, उसकी शक्ल-सूरत भले इन्सान की हो, लेकिन वह इन्सान नहीं है—ठीक वैसे ही, नमक में नमकीनपन न हो, खारापन न हो, शक्कर में मिठास न हो तो वह सिर्फ एक पाउडर जैसी चीज होगी, शक्कर या नमक नहीं। इसलिए आदमी में दूसरे और गुण हों या न हों, लेकिन इन्सानियत तो कम-से-कम होनी ही चाहिए।

बाजार से प्रेम नदारद : दुख की बात है कि आज इन्सानियत ही नहीं है। बाजार में यह नहीं मिलती, प्रेम नहीं मिलता। छोटा बच्चा दो पैसे का गुड़ खरीदने के लिए बाजार जाता है, तो दूकानदार मान लेता है कि यह लूटने का अच्छा मौका है, ठग लेने का अच्छा मौका है। बेचारा बच्चा बाजार-भाव क्या जाने? इसलिए दूकानदार को मौका मिलता है। *मजा यह कि कुछ लोग इधर धर्म भी करते हैं, उधर दुनिया को कसकर लूटते भी हैं, चूसते भी हैं। आज कितना दगा दिया जा रहा है! हर चीज में मिलावट होती है। कोई चीज ऐसी नहीं, जो खालिस मिल सके। घी, दूध में तो मिलावट होती ही है, दवा तो कम-से-कम खालिस हो! लेकिन वह भी खालिस नहीं मिलती। इतनी बेरहमी चल रही है। दवा बीमार के लिए होती है, उसमें भी मिलावट! फिर उसके बुरे असर होते हैं—कुदरत का कोप इन्सान के ऐसे कामों का ही परिणाम है।*

अल्लाह पचास नहीं हो सकते : *आज एक बड़ा भेद है मजहब का। चाहे आप उसे अल्लाह, ईश्वर, गॉड जो भी नाम दें, है वह एक ही। पचास अल्लाह हो नहीं सकते। चाहे उसके अनेक नाम लिये जायं तो भी वे सारे एक ही परमात्मा के नाम हैं, इसे सभी जानते हैं।* कोई रहम, दया, नरमी चाहता है और वह अल्लाह को रहीम कहकर उसकी इबादत करता है, तो अल्लाह से उसे नरमी मिलती है। कोई देखता है कि मेरे दिल में झूठ-फरेब है और इसे धोना चाहिए तो वह परमात्मा को 'अलहक' (सत्य) नाम देकर सत्य की इबादत करता है। इसी तरह हर कोई अपने दिल का मैल धोने के लिए जिस किस्म के परमात्मा की जरूरत हो, उसकी इबादत करता है।

अलग-अलग मजहबों के मानी : *अलग-अलग मजहबों के मानी हैं, परमात्मा के पास पहुंचने के अलग-अलग रास्ते। एक मामूली शहर में पहुंचने के कई रास्ते होते हैं। तो परमात्मा के पास पहुंचने के कई रास्ते होते हैं। तो परमात्मा के पास पहुंचने के लिए जो अजीम हस्ती है, एक ही राह क्यों होनी चाहिए? अगर यह ध्यान में आ जाय कि अलग-अलग मजहब यानी इबादत के अलग-अलग तरीके हैं तो मजहब के झगड़े मिट जायेंगे और मिटने ही चाहिए। आज हम परमात्मा की मर्जी के खिलाफ काम कर रहे हैं। समझना होगा कि मजहब दुनिया के तोड़ने के लिए नहीं, बल्कि जोड़ने के लिए हैं, इसलिए हमें मजहब के भेद मिटा देने चाहिए।*

एक ही मजहब में अनेक पंथ, जातियां और पद चलते हैं। ऊंच-नीच के इस मामले ने हमारे देश को तंग कर दिया है। इसलिए हम इसे बिल्कुल खत्म करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि यह चीज नेस्तनाबूद हो जाय। इसे हम समाज-सुधार या समाज में बराबरी लाना कह सकते हैं।

मजहबी झगड़े गलत : *मजहब के झगड़े गलत हैं। सबके इबादत के तरीकों का सबको फायदा मिलना चाहिए। आपको एक तजुरबा हुआ, दूसरे को दूसरा हुआ तो एक-दूसरे के तजुरबों का एक-दूसरे को फायदा मिलना चाहिए। कोई 'सा' बोलता है, कोई 'रे', कोई 'ग', तभी संगीत बनता है।* अलग-अलग सुर हों, लेकिन उनका अच्छा मेल हो तो संगीत बनता है। हिन्दुस्तान में इबादत के कई तरीके इकट्ठा हुए हैं। सूफियों, वेदान्तियों और भक्तों ने अलग-अलग तरीके इकट्ठा किये हैं। उन सबका फायदा हमें मिलना चाहिए।

परिवार का प्यार गांव में लागू हो : परिवार में क्या होता है? लोग कमाते हैं। किसी की कमाई एक रुपया होती है तो किसी की बारह आना। लेकिन सब कमाई इकट्ठी करते हैं और वह सारे परिवार की है, ऐसा मानते हैं। घर में यह 'मेरी कमाई' यह 'तुम्हारी कमाई' ऐसी भाषा नहीं होती है। सभी कहते हैं कि वह 'हमारी कमाई' है। 'हमारी' कहने से सबको तसल्ली होती है, दिल को सुकून होता है और प्यार हासिल होता है। हर परिवार में यही होता है कि जिसे जितनी जरूरत है, भूख है, वह उतना खायेगा। सब कमाई मुश्तरका शामिल होती है। इससे हम परिवार में बड़े सुख और चैन से रहते हैं।

परिवार में मिल्कियत अलग-अलग नहीं होती। अगर कल ऐसा कानून बन जाय कि परिवारों में भी अलग मिल्कियत होगी तो आज जो खुशी है, वह हरगिज नहीं रह सकेगी। आज घर में, परिवार में एकत्र मिल्कियत और कमाई है। इसीलिए यह 'घर' कहलाता है। आप यही बात गांव में भी लागू कीजिए।

शक्ति जोड़ें : आज गांव में कोई सौ एकड़ का मालिक है तो कोई दो एकड़ का। कोई बहुत जमीन वाला है, कोई बेजमीन है। कोई मालिक है, कोई मजदूर। इस बात से गांव के टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं। घर में सब पर बड़ा प्यार किया जाता है और गांव में पड़ोसी पर प्यार करने में कंजूसी बरती जाती है। घर में प्यार और समाज में होड़ चलती है। *मेरे घर में खाने के लिए मिठाई है, पकवान हैं, पड़ोसी के घर में खाने के लिए कुछ भी नहीं। लेकिन मैं मजे से मिठाई खा रहा हूं। उसकी और मेरी कमाई अलग है। उसके लिए मैं जिम्मेवार नहीं हूं—यह जो ख्याल है, वह इन्सानियत के खिलाफ है। हमने प्यार को घर में कैद कर रखा है। नतीजा यह हुआ कि आज कोई सुखी नहीं है।* पड़ोसी के पास सात सेर ताकत है और मेरे पास दस सेर। हमारी ताकत अगर एक-दूसरे से टकरायेगी तो मुझे 10-7=3 सेर का लाभ मिलेगा। इससे मेरा भी नुकसान होगा और उसका भी नुकसान! लेकिन हमारी ताकत एक-दूसरे की मदद करेगी तो हम दोनों को 10+7=17 सेर का लाभ होगा।

आज जोड़ने के बदले तोड़ने का काम

हो रहा है। मेरे दो हाथ और आपके दो हाथ मिलकर चार होते हैं। पर वे एक-दूसरे को काटेंगे तो 2-2=0 होगा। इसलिए गांव वालों की जो ताकत है, वह इकट्ठी होनी चाहिए।

गांव की ताकत : *आज तक मैं इतना ही कहता था कि गांव एक बनें, लेकिन अब कहना चाहता हूं कि गांव वाले एक-दूसरे के लिए मर-मिटने के लिए तैयार हों, जिससे कि गांव एक मजबूत फौज बने। दुश्मन से लड़ने वाली फौज नहीं चाहिए, क्योंकि उसके सामने कोई दुश्मन ही नहीं है, उसके बजाय प्रेम करने वाली फौज बने।* जैसे फौज वाले अनुशासन से—कानून से—रहते हैं, वैसे ही गांव वाले अपना एक कानून बनायें और उसके मुताबिक चलें। राज्य का कानून अलग है, गांव की ताकत किस प्रकार बढ़ सकती है और गांव के हर तबके के लिए क्या-क्या करना होगा। समाज में तबके होते हैं। हर तबके की जो सिफत होती है, उसे प्रकट करने का मौका मिलना चाहिए। हमारे गांव का कोई मनुष्य दुःखी हो और वह अकेला रोता रहे, यह हम बर्दाश्त नहीं करेंगे। सारा गांव उसके दुख में शामिल होगा तो उसके दुख का भार हल्का होगा। इस तरह गांव वाले सुख-दुःख दोनों बांट लेंगे।

दिल एक रहे : गीता में *भगवान ने अपना विराट रूप दिखाया। उसके हजार हाथ हैं, हजार पांव हैं, हजार कान हैं, हजार नाक हैं, हजार मुंह हैं—सभी कुछ हजार-हजार। लेकिन दिल? दिल हजार नहीं बताया! यह समझने की बात है। इसलिए सबका दिल एक होना चाहिए।* गांव-गांव का, जिले-जिले का, प्रांत-प्रांत का व देश-देश का दिल एक होना चाहिए। जहां दिल एक हो जाता है, वहां परमेश्वर का रूप प्रकट होता है।

कुछ लोग कहते हैं कि जमीन एक करो। हम कहते हैं कि जमीन तो एक करेंगे, लेकिन पहले ये दिल तो एक हो जायं। ग्रामदान यानी सब गांव का एक दिल। इस तरह से हम यह कोशिश करेंगे कि भगवान की कृपा से पाकिस्तान, अरबस्तान, कोरिया, मिस्र, यूरोप, अमेरिका, लंका आदि सभी अलग-अलग देशों का दिल भी एक हो जाय। ❑

चलें गांव की ओर...

खेती-अर्थनीति और गांव-सुधार

❑ जे. सी. कुमारप्पा

अगर कोई देश अपनी बुनियादी जरूरतें—खाना, कपड़ा और मकान खुद नहीं पूरी करता, तो उसे आजाद नहीं कहा जा सकता। हमारी खेती-अर्थनीति एक ऐसी चीज है, जो हमें अपने पांव पर खड़ा कर दे सकती है। हमारा देश हमेशा से खेतिहर देश रहा है और जो भी उद्योग-धंधे यहां चलते थे, वे खेती से मिले-जुले होते थे।

कारखाना या धंधा : अनाज उपजाने का जो अमेरिकी ढंग है, उससे खेती एक धंधे के बजाय एक कारखाना बन गयी है। यह भेद हम इस वजह से साफ-साफ बता देना चाहते हैं; क्योंकि जो तरह-तरह के फर्क बाद में पैदा होते हैं, जो तरीके इस्तेमाल में लाये जाते हैं और जो उसूल अपनाये जाते हैं, वे इसी भेद के नतीजे हैं।

कारखाने की खूबी यह है कि उसे इस बात से कोई सरोकार नहीं रहता कि लोग हिन्दुस्तान में या दुनिया में कहीं भी भूखे मर रहे हैं। उसका तो बस एक ही मकसद होता है, वह यह कि दाम ऊंचे बने रहें। इन्सानियत का कोई खयाल जरा भी नहीं किया जाता। बस, ख्याल इस बात का रखा जाता है कि पूर्ति कम की जाय, ताकि मांग बनी रहे और दाम चढ़े रहें।

अमेरिका में जमीन भरपूर है। इसलिए वहां पर लोग हलवाई के सब निकम्मे और लालची तरीकों को अख्तियार करके महाजनी की खातिर अनाज पैदा करते हैं।

खाद : हमारा देश एक बहुत पुराना देश है, जिसकी आबादी घनी है। दो फसलों के बीच जमीन को कुछ मोहलत मिलनी चाहिए। जमीन से हम जितना ज्यादा कस खींच लेंगे, उतनी ही देर उसके दोबारा जरखेज होने में लगेगी। सदियों के अनुभव के बीमा पर हमारे खेती करने के तरीके ऐसी हालत को पहुंच गये हैं, जिनसे जमीन की पैदावार और उसके फिर से भर आने में मेल कायम हो गया है। अगर हम हलवाई के तरीकों को इस्तेमाल करके यह कोशिश करें कि जमीन को उभारकर जितना हो सके चूस लें, तो जिस रफ्तार से वह अपने को भर सकेगी, उससे कहीं ज्यादा तेजी से हम उसका उपजाऊपन खत्म कर देंगे। हमारी इन करतूतों से एक अच्छा खासा काश्तकारी के लायक इलाका बंजर रेगिस्तान बन जायेगा। अगर हम खेती के अमेरिकी तरीके अपनाने का फैसला करते हैं, तो यह खतरा हमारे सामने है। बेहतर यह है कि यह देखते हुए कि हमारी जमीन का उपजाऊपन बना रहता है, हम कम पैदावार पर ही संतोष कर लें। सवाल महज पैदावार की तादाद का नहीं है, बल्कि एक महत्त्वपूर्ण चीज यह भी है कि जो

जमीन हमें मयस्सर है, उसके लगातार इस्तेमाल और पैदावार में ताल बैठता है या नहीं। हम यह बतायेंगे कि इन दो तरीकों पर जब अमल किया जाता है, तो इससे जो नतीजे पैदा होते हैं, उनमें किस कदर जमीन-आसमान का भेद हो जाता है।

बहुत से साइन्सदानों का कहना है कि बनावटी खाद देने से जमीन का कस जाता रहता है। मिट्टी में कीड़े नाम के जंतु होते हैं। यह जंतु हमारी जरूरत का काफी खेती-काम कर डालते हैं। इनके काम के बराबर महत्त्वपूर्ण वह काम नहीं होते, जो आदमी किया करता है; जैसे जुताई, निकाई वगैरह। यह जंतु मिट्टी में होने वाला ह्यूमन नामक वनस्पति की जात का माद्दा खा लेते हैं और उसे अंदर ही अंदर पचाकर एक ऐसी खाद की शक्ल में बाहर निकालते हैं, जिसे मिट्टी हजम कर लेती है। जमीन में वह जो सुराख किया करते हैं, उसकी वजह से हवा और पानी अंदर जाना मुमकिन हो जाता है और उनसे कुछ तत्त्व लेकर मिट्टी मालामाल हो जाती है। इस तरह यह जंतु सचमुच मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं और अपना कस वापस लाने में उसे मदद देते हैं।

लेकिन बनावटी खाद इस्तेमाल करने से इन जंतुओं को वह जरूरी वनस्पति माद्दा नहीं पहुंच पाता, जिससे उनको अपनी खुराक मिल जाये। साइंस से बनायी बनावटी खाद देते रहने से यह जंतु मर जाते हैं, क्योंकि वह दवाओं पर तो रह नहीं सकते। इनको पनपने की खातिर बाड़े की खाद चाहिए। यह खाद मिट्टी के लिए मानो खास खुराक है। साइंस की खाद इस्तेमाल करने का तरीका यह है—पहले तो हम जमीन जोतते हैं। जहां वह निकम्मी हुई, तो जरा गहरा जोतते हैं। ऐसा करते-करते हमें पता चलता है कि मिट्टी एक चट्टान की तरह सख्त हो गयी है। इसकी वजह यह है कि मिट्टी को ढीला करने वाले जंतु तो खत्म ही हो चुके हैं। बाद में आप किसी तरह भी उस जमीन से काम नहीं ले सकते। हिन्दुस्तान में हमारे पास जमीन वैसे ही थोड़ी है, इस तरीके को अपनाने से बंटाधार ही होगा।

रसायनी खाद को दवा समझना चाहिए। दवा और खुराक में फर्क होता है। दवा की कभी-कभी जरूरत पड़ सकती है। मान लीजिए, कोई आदमी शराब खूब ऊपर तक पीकर नशे में नाच रहा है, तो क्या हम उसके काम को ताकत का कारनामा कहेंगे? यह तो उसकी नसों की एक केवल खलबली है। थोड़ी मेहनत के बाद वह थककर हार जायेगा। जरा देर बाद आप देखेंगे कि वह किसी नाली में पड़ा है। यही हाल रसायनी खाद देने पर जमीन का होता है। माना कि इन खादों का एक महत्त्व है। जब कोई बीमार पड़ता है, तो डॉक्टर आकर सुई लगा जाते हैं। रोग के लिहाज से वे बहुत थोड़ी तादाद में यह इंजेक्शन देते हैं। वे मरीज की जांच करते हैं, खास करके दिल की और वह देखते हैं कि मरीज की बर्दाश्त कितनी है। फिर उसी के एतबार से दवा लगाते हैं। मलेरिया में डॉक्टर लोग कुनैन देते हैं। अब फर्ज कीजिए, कोई रोगी यह सोचे—''डॉक्टर मुझे कुनैन दे रहा है। कहता है, दिन में दो-तीन या हद पांच ग्रेन लो। अगर मैं इकट्ठी ले लूं, तो जल्दी अच्छा हो जाऊंगा। इसलिए कुनैन का एक लड्डू-सा बनाकर खा डालूं?'' इसका क्या नतीजा होगा? उसका मलेरिया तो अच्छा हो जायेगा, लेकिन न मर्ज रहेगा न मरीज। मलेरिया के जर्म उसे लेकर ही मरेंगे। लेकिन अगर हम मैदे का लड्डू तैयार करें और अपने हाजमे के मुताबिक खायें, तो उससे फायदा ही होगा।

इसलिए *रसायनी खाद को खुराक के बजाय दवा के तौर पर इस्तेमाल करना चाहिए। उनका इस्तेमाल तभी किया जाये, जब मिट्टी को अच्छी तरह जांच लिया गया हो और खास-खास इलाकों में खास-खास तादाद में इस्तेमाल करना चाहिए।*

लेकिन जब कोई आदमी धरती के मालामाल हो जाने को कारखाने या सनअत के लिहाज से देखता है, तो धरती की आखिरी गत के लिए उसे जरा भी परवाह नहीं होती। उसे तो बड़ी फसल और जोरदार पैदावार चाहिए। कई बरस तक तो वह जमीन को रसायनी खाद दे-देकर, उपजाऊ बना-बनाकर खूब पैदा कर लेता है। लेकिन बाद में उसे कुछ नहीं मिलने वाला है।

कारखानों में तो यह तरीका काम में लाया जा सकता है। अमेरिका में एक बार पेट्रोल को बुरी तरह इस्तेमाल किया गया है। एक मरतबा वहां के लोग यह समझते थे कि हमारे पास पेट्रोल का अथाह भंडार है। लेकिन अब उनको बाहर के ऐसे इलाके चाहिए, जहां पेट्रोल होता हो। कोई इस तरह से बरबादी करता है, तो एक दिन यह नौबत आ जाती है कि वह दूसरे के माल पर हाथ साफ करना चाहता है। यह लोभ जो है, वह हिंसा पैदा करने का जबरदस्त चश्मा है।

बनावटी खाद ऐसी चीज ही नहीं है, जिसे हमारा हिन्दुस्तान बर्दाश्त कर सके। लेकिन अगर आप इसका इस्तेमाल करना ही चाहते हैं, तो साथ-ही-साथ आप देश की सारी मिट्टी की रसायनी जांच कराइये और यह इत्मिनान कर लीजिए कि कहां पर इसकी जरूरत है और कितनी जरूरत है।

कुछ खेत ऐसे हैं, जहां ज्वार और दूसरी चीजें बोयी जाती हैं। कुछ पौधे दस-बारह फुट ऊंचे होते हैं और कुछ बालिश्त बराबर भी नहीं होते। इसके क्या मानी हैं? यही कि कहीं जमीन बहुत अच्छी है, कहीं बहुत खराब। उस खराब जमीन को आप देखिये और जो कुछ जरूरी है, उसे दीजिए। *हमारे देश में आदमियों के लायक डॉक्टर तो हैं नहीं, मिट्टी के लिए फिर कौन कहे? इसलिए हिन्दुस्तान में रसायनी खाद इस्तेमाल करना बेहूदगी है। बिहार और ट्रावनकोर में*

रसायनी खाद बनाने के कारखाने हैं। हलवाई की तरह पूंजीपति यह चाहते हैं कि गरीब रैयत की जेब का पैसा अपनी जेब में आ जाये। हिर्स के इन फंदों से हमें बचना चाहिए।

अगर काश्त के इन दोनों तरीकों की हम छानबीन करें, तो पहला तरीका मां के हलुवा बनाने जैसा है। हमें जमीन की एहतियात वैसी ही रखनी चाहिए, जैसे मां बच्चे की रखती है। धरती से व्यवहार करने का तरीका या खेती-अर्थनीति को हमें यह ख्याल रखकर बनाना होगा कि हम जमीन को उभार-उभार कर चूसना चाहते हैं या उसे खिलाकर उससे काम लेना चाहते हैं।

धरती के साथ व्यवहार करने के तरीके के नतीजे तरह-तरह के होते हैं। छोटी मुद्दत वाले तरीके बरबादी लाते हैं। अमेरिकी खेती हिन्दुस्तानी खेती की तरह एक धंधा नहीं, बल्कि व्यापार है। इसलिए किसान का कुदरती विकास रुक जाता है और दूसरों के साथ उसका रवैया बदल जाता है। व्यापारी को इसकी जरा भी फिक्र नहीं रहती कि मेरे ग्राहक कौन हैं। खर्च करने वाले से उसका कभी कोई संबंध नहीं होता। मां के तरीके का आधार तो आदमी और उसकी जरूरतें हैं। हिन्दुस्तान में अनाज की कमी होने पर भी तंबाकू की काश्त बढ़ायी जा रही है। यह हलवाई ढंग है। खाने के लिए नहीं, बल्कि पैसे के लिए वे पैदा कर रहे हैं। हमारी अर्थनीति में ऐसी हालत और भी बहुत-सी चीजों की है। यह तय करना जरूरी है कि हम क्या करना चाहते हैं? स्वावलंबन चाहते हैं या मुट्ठीभर आदमियों को मालामाल कर देना चाहते हैं? एक डाम बनाने के माने होते हैं, करोड़ों रुपया खर्च करके लाखों एकड़ जमीन को काश्त में लाना और बिजली पैदा करना। मकसद क्या है? बिजली बेचना। पूंजीपति लोगों की दिलचस्पी तो महज दाम बनाने में है। बिजली बनाने और लाखों एकड़ में सिंचाई कर लेने की बातें व्यापारी की बातें हैं। अगर आपको बड़े-बड़े इलाके की सिंचाई ही करनी है, तो जरूरत सिर्फ इस बात की है कि जहां-जहां मिट्टी बही जा रही हो, वहां पांच-पांच सौ रुपये लगा दीजिए या जहां जरूरत हो, कुएं खुदवा दीजिए। बाकी सब संभाल गांव वाले कर लेंगे। तब खर्च भी इतना भयानक नहीं होगा। गांव वालों को सामान सरकार दे ही सकती है। लोगों की मदद से सवाल को हल कर लेने का यह एक बहुत अच्छा ढंग होगा। इससे एक नतीजा यह भी होगा कि लोग सरकारी चीजों की कद्र करने लग जायेंगे और उनका एहतियात से बरतेंगे।...

अनाज का भाव : अनाज और खेती की दूसरी चीजों का भाव किसान नहीं तय किया करता है। इसके अलावा कुछ चीजें ऐसी हैं, जिनपर उसका कोई बस नहीं चलता है और फिर मानसून के सहारे रहने की वजह से साल में कई महीने वह खाली भी रहता है। लेकिन इस अर्से में पेट को तो रोटी चाहिए ही। लेकिन इस बात को हम पैदावार के दाम लगाते समय भूल ही जाते हैं। *मान लीजिए, किसी आदमी ने साइकिल बनाकर छह महीने तक अपने शो रूम में छोड़ दी। जब वह उसे बेचता है, तो मकान-भाड़ा लगाकर और काफी मुनाफा वगैरह जोड़कर दाम निकालकर बेचता है। यह सब चीजें तैयारी या पैदावार के दाम में शामिल की जाती हैं। यही बात किसान के बारे में लागू होनी चाहिए, हमारे अर्थकार कहे जाने वाले विद्वान लोग बैठे-बैठे लोहा, तेल, कपड़े वगैरह ऐरी-गैरी चीजों के दाम लगाकर कुछ छू-मंतर करके 'दाम-इंडेक्स' नाम का जादू दिखाते हैं। इससे वह यह हिसाब लगाते हैं कि अनाज के क्या भाव होने चाहिए और उसी भाव को पक्का ठहरा देते हैं। उन्हें इससे कोई मतलब ही नहीं कि असली खर्च कितना पड़ा। यह स्वांग सरकार और शहरी खर्चकार दोनों मिलकर करते हैं—पैदाकार से जरा भी नहीं पूछते। इस तरह सरकार और खर्चकार मिलकर देहात को लूटते हैं।* यह चीज जोरों से हो रही है। वे इन मायने में देहात को सचमुच लूटते हैं कि उसके लगाये भाव का कोई ताल्लुक असली पैदावार से कुछ भी नहीं होता। यह हरकत अंग्रेजी राज्य में तो होती ही थी, आज भी हो रही है।

किसानों को चूसा न जाये और उनकी जरूरतें इत्मिनान के साथ पूरी हो सकें—इन बातों को ध्यान में रखकर *मैंने 'समतोली खेती' नाम की एक योजना तैयार की है। 'समतोली खुराक' के नाम से तो पढ़े-लिखे लोग वाकिफ हैं। लेकिन यह खुराक, फिर खासकर देहात में कहां नसीब होती है! हमने यह हिसाब लगाया है कि ऐसी खुराक पहुंचाने के वास्ते दस-पंद्रह गांव की आबादी के लिए कितनी जमीन की दरकार होगी। इसके बाद उस इलाके का सर्वे किया जाता है यह देखने के लिए यह कितने एकड़ में गेहूं बोया जा सकता है, कितने में सब्जी, कितने में मक्का वगैरह और इस तरह हम यह पता लगाते हैं कि खेती को समतोली कैसे बनाया जाये। अगर कोई-कोई चीज हमारे पास कम है, तो कोई-कोई ज्यादा भी हो सकती है। इन बढ़ती चीजों का कम चीजों के बदले में लेन-देन कर लिया जाता है। अगर बढ़ती चीजों का ही लेन-देन किया जाता है, तब हिंसा या अन्याय की कोई गुंजाइश ही नहीं है। हिंसा और अन्याय तो ऐसी लेन-देन से पैदा होते हैं, जो स्वालंबन के दर्जे से नीचे रहती हैं।*

लेकिन यह तभी किया जा सकता है, अगर हम खेती को एक धंधे की शक्ल में देखें। अगर हम सारे इलाके को माली तौर से ऊपर उठाना चाहते हैं, तो जमीन का इस्तेमाल समझ-बूझकर करना चाहिए। खेती अपनी जरूरत के मुताबिक होनी चाहिए और जो चीजें हमारे पास अपनी जरूरत से ज्यादा हैं, उनका लेन-देन उन चीजों से किया जाये, जिनकी हमें जरूरत है। ❑

साक्षात्कार

कोई भी राजनीतिक पार्टी किसान के हित में सोचती ही नहीं

किसान नेता विजय जावंधिया से सर्वोदय जगत के संपादक अशोक मोती की बातचीत

किसान मंच व सर्व सेवा संघ, वाराणसी के संयुक्त तत्त्वावधान में 16-18 सितंबर, 2017 को आयोजित तीन दिवसीय 'राष्ट्रीय किसान परिसंवाद' सम्पन्न। इस अवसर पर उपस्थित थे मुख्य प्रेरक किसान अधिकार अभियान, वर्धा के अविनाश काकड़े, नूतन मालवी एवं किसान मंच के विनोद सिंह, सुभाष शर्मा, संतोष भारतीय एवं वरिष्ठ नेता विजय जावंधिया।

किसान नेता विजय जावंधिया

प्रश्न : 1980 से हुए किसान आंदोलन से आप जुड़े रहे हैं, आज जो आंदोलन हो रहा है, उसके स्वरूप में क्या अंतर है?

उत्तर : 1980 में देश की राजनीति में केन्द्र और कई राज्यों में कांग्रेस का राज्य था, इसलिए किसान आंदोलन को संगठित करना उस जमाने में आसान था। महाराष्ट्र के गांवों में कांग्रेस के अलावा कोई राजनीतिक शक्ति थी ही नहीं। 1990 से किसान आंदोलन कमजोर होना शुरू हुआ, जब से राममंदिर का विवाद खड़ा हुआ। वैश्वीकरण के कारण भी किसानों में फूट हुई। बाद में मंडल आयोग के परिणाम आने से जो जातीयता हुई, उसके कारण भी किसान संगठन कमजोर होते गये।

आज जो प्रमुख किसान जातियां हैं, वह शिक्षा में और नौकरियों में आरक्षण के लिए आंदोलन कर रही हैं। तो फिर किसान आंदोलन का क्या होगा? गुजरात में पटेल जाति, महाराष्ट्र में मराठा, कर्नाटक में लिंगायत, उत्तर प्रदेश में जाट, राजस्थान में गुर्जर, आंध्र में कम्मा और रेड्डी आरक्षण के लिए काम कर रही हैं, न कि किसान आंदोलन के लिए। इसका मतलब यह है कि नयी पीढ़ी खेती नहीं करना चाहती। सामूहिक असर यह है कि जो युवक खेती करता है उसे किसान भी अपनी लड़की नहीं देना चाहता है। यह बताता है कि खेती की प्रतिष्ठा क्या है और यह स्थिति पूरी दुनिया में है। नार्वे गया था तो एक किसान के पास गया। जानकारी मिली कि जो लड़का खेती करता है, उसे लड़की नार्वे में नहीं मिली, जर्मनी में विवाह के लिए लड़की मिली। जबकि नार्वे में खेती पर सरकार पूरी मदद करती है, फिर भी खेती करने वालों की इज्जत नहीं है। अपने भारत में किसान को सरकार तो कोई मदद ही नहीं देती और उत्तम नौकरी मध्यम व्यापार और कनिष्ठ खेती हो गयी है। यानी आर्थिक नीतियों के कारण पूरा प्रतिमान बदल गया है।

प्रश्न : किसान आंदोलन के मुद्दे में क्या अंतर है?

उत्तर : किसान आंदोलन में मुख्य मुद्दा बदला है, जो जरूरी भी है। 1980 में महाराष्ट्र में एक बात से किसानों का दिल हम जीत लेते थे कि फसलों का लाभप्रद दाम न देना सरकार तयशुदा नीति है। खेती का धंधा 100 का 60 करना और बाप का नाम चढ़ाना है। यह किसान के हृदय की बात थी, इससे किसान संगठित हुए और ताकत खड़ी हुई। किन्तु 1990 में नयी आर्थिक नीति आयी। डंकल प्रस्ताव, विश्व व्यापार संगठन, वैश्वीकरण का दौर और इससे किसान आंदोलन में फूट हो गयी। एक खेमा कहता था कि पूरे विश्व का व्यापार जब खुला होगा तो भारत के किसान को भी लाभ होगा। दूसरा खेमा इसे गलत मानता था। अमेरिका, यूरोप के किसानों को बहुत सब्सिडी दी जाती है और उससे दुनिया के बाजार में दाम गिराये जाते हैं। यह तीस वर्ष बाद भी ऐसा ही चल रहा है। 1995 में विश्व व्यापार संगठन की स्थापना हुई, जिसमें दुनिया के बाजार में कपास का दाम एक डालर 10 सेंट था।

परिसंवाद में सहभाग करते लोग

एक पौण्ड रुई (आधा किलो) आज 2017 में भी वह दाम 80 सेंट यानी 40% कम हो गया। इसके बाद भी अमेरिका का किसान आत्महत्या नहीं करता क्योंकि 4.6 विलियन डॉलर (30 हजार करोड़) की सब्सिडी दी जाती है। इसी तरह दुनिया में 24 रुपये किलो शक्कर है। मुक्त व्यापार के हिसाब से यदि बाहर से चीनी लाये तो रुपये 30/- किलो की दर से चीनी भारत में उपलब्ध हो जायेगी लेकिन गन्ना उत्पादन करने वाले किसान मर जायेंगे। इसलिए भारत सरकार ने शक्कर के आयात पर 50% आयात कर लगायी है। इसलिए कीमत हमारे 40-42 रुपये प्रति किलो बना हुआ है। यह गन्ना किसानों की आर्थिक हितों की रक्षा के लिए जरूरी है। यह भी इस बात का सबूत है कि इस तरह सरकार का हस्तक्षेप किसान हितों की रक्षा के लिए जरूरी है। इससे यह साफ है कि मुक्त अर्थव्यवस्था का समर्थन करना किसानों को गुमराह करने जैसा था।

प्रश्न : किसान आंदोलन केवल वर्गीय आंदोलन में सीमित रखेंगे तो उसी तरह के जो गांव के सीमांत किसान और श्रमिक हैं, उनका क्या होगा?

उत्तर : यह कहकर किसान आंदोलन बड़े जमीन वाले किसानों का आंदोलन है, इससे किसान आंदोलन को बदनाम किया जा रहा है। जब किसान आंदोलन यह मांग करता है कि लागत पर आधारित कृषि उपज का दाम मिलना चाहिए और खेती की लागत में सबसे बड़ा हिस्सा तो मनुष्य के श्रम का है, तो मनुष्य श्रम को उचित मूल्य देना और उसको हिसाब में लेकर मूल्य तय करने में समाज के हर वर्ग का हित सम्मिलित होता है। यह सब कहता है कि गांव में जो भी रहते हैं, जिसका खेती पर आधारित जीवन है, वह सब किसान हैं। इसलिए हम लोगों के आग्रह पर डॉ. मनमोहन सिंह 30 जून 2006 को मेरे गांव वायफड, जिला वर्धा आये थे। तो मैंने यह मांग रखी थी कि जब छठवां वेतन आयोग लगाओगे, उसका न्यूनतम वेतन जो होगा, वह हमारे गांव के भाई-बहनों का होना चाहिए और उस वेतन को हिसाब में लेकर देश के कृषि मूल्य और लागत आयोग में फसलों का दाम घोषित करना चाहिए। यह दाम बाजार व्यवस्था में नहीं मिलेंगे। इसलिए सरकार का हस्तक्षेप अनिवार्य है। इसका जवाब देते समय डॉ. मनमोहन सिंह ने कहा कि मैं आपके बात से सहमत हूं। कृषि मूल्य और लागत आयोग की कार्य-पद्धति में बदलाव करने की जरूरत है। दिल्ली जाने के बाद संबंधित को बुलाकर बात करता हूं।

परिसंवाद में सहभाग करते सर्वोदय जगत के प्रधान संपादक श्री बिमल कुमार एवं संपादक श्री अशोक मोती

मुझे लगता है कि मेरे छोटे से गांव में मुझ जैसे छोटे कार्यकर्ता को दुनिया का जाना माना अर्थशास्त्री ऐसा जवाब देता है तो यह बड़ी बात है। मैं यहां यह भी उल्लेख करना चाहूंगा कि मनमोहन सिंह ने 2008 में फसलों के समर्थन मूल्य की घोषणा की थी उसमें उन्होंने इस बात को ध्यान में रखकर घोषणा की थी। उदाहरणस्वरूप कपास का दाम 2007-08 में रुपये 2030 था, उसको 2008-09 में रुपये 3000 कर दिया, यानी 50% बढ़ाया। ज्वार रुपये 600 प्रति क्विंटल था, उसे 840 कर दिया। मूंगफली 1550 से 2100, धान का दाम 645 से 850 कर दिया। दुर्भाग्यवश बाद में जब इन्हीं की सरकार केन्द्र में आयी तो इनपर शहरी लोगों का दबाव बन गया। और तो और विपक्ष की भाजपा, जिसके कई राज्यों मुख्यमंत्री थे (आज के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी गुजरात के मुख्यमंत्री थे) ने मूल्य वृद्धि करने की मांग नहीं रखी। जितनी महंगाई दर बढ़ती है, हर साल 8-10 प्रतिशत, उतनी भी समर्थन मूल्य में वृद्धि हुई होती तो आज किसान की हालत आत्महत्या करने जैसी नहीं होती। यह इस बात का द्योतक है कि कोई भी राजनीतिक पार्टी किसान के हित में सोचती ही नहीं है। फसलों के दाम बढ़ते हैं तो महंगाई की चर्चा होती है। हमारे रिजर्व बैंक के गवर्नर या देश का अर्थशास्त्री यह कहते हैं कि समर्थन मूल्य यदि बढ़ा तो मुद्रा स्फीति बढ़ेगी। लेकिन वेतन आयोग के माध्यम से जो वेतन वृद्धि होती है, या जनप्रतिनिधि मनोनुकूल अपना वेतन बढ़ाते हैं, उससे मुद्रा स्फीति नहीं होती है?

प्रश्न : ग्रामशक्ति को यदि किसान आंदोलन मदद न करे तो क्या ग्रामशक्ति मजबूत होगी?

उत्तर : विनोबाजी ने भी यह कहा था। उन्होंने भूदान आंदोलन किया, ग्रामदान किया, कृषि के अर्थशास्त्र की चर्चा की थी, जिसपर आज बहुत चर्चा नहीं हो पायी, यह दुर्भाग्यपूर्ण है। 1970 में बिहार के एक गांव में भाषण करते विनोबा ने कहा था कि जमीन बांटने से मसले का हल नहीं है। जनसंख्या बढ़ने से जमीन के टुकड़े हो जायेंगे। इसलिए गांव की एकता जरूरी है कि गांव की एकता

का मजा शहरवासियों का चखाना है। क्योंकि शहरों की जरूरतों की पूर्ति गांव वाले करते हैं और गांव वाले को उसके दाम तय करने का अधिकार नहीं है। आज वही बात सरकार यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि यह बात वर्तमान प्रधानमंत्री मोदीजी अपने चुनाव की सभी सभाओं में कही हुई बातों से मुकर गये हैं।

प्रश्न : मल्टीनेशनल और कॉरपोरेट नहीं हुई तो किसान आंदोलन कैसे बढ़ेगा?

उत्तर : बहुराष्ट्रीय कंपनियों का शिकंजा बढ़ गया है, यह आपका कहना सही है। इसका कारण यह है कि हमारी कृषि संशोधन

भारत की कृषि समस्या : राष्ट्रीय परिसंवाद सम्पन्न

भारतीय कृषि समस्या को सुलझाने के लिए सामूहिक प्रयासों की जरूरत

गांधी 150वीं जयंती अभियान के तहत 23-24 सितम्बर, 2017 को सेवाग्राम आश्रम, सर्व सेवा संघ व सद्भावना संघ के संयुक्त तत्त्वावधान में भारत की कृषि समस्या पर आयोजित राष्ट्रीय परिसंवाद में सहभागी किसान, आन्दोलकर्ता एवं कार्यकर्ताओं का सामूहिक मत रहा कि कृषि समस्या देश की बहुसंख्य समाज से जुड़ी हुई मुलभूत समस्या है। इसपर गंभीरता से सोच-विचार, अध्ययन व योग्य निष्कर्ष निकालकर सामूहिक प्रयासों को बढ़ाने की जरूरत है।

सेवाग्राम आश्रम के 'यात्री निवास' परिसर में कृषि समस्या पर आयोजित राष्ट्रीय परिसंवाद में देश के प्रमुख सहभागी साथियों में से महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, केरल, छत्तीसगढ़, ओडिशा, उत्तर प्रदेश आदि प्रांतों से प्रतिनिधि आये थे।

इस दो दिवसीय राष्ट्रीय परिसंवाद में कुल छः सत्र हुए, जिसमें में एक-एक विषयों का चयन करके चर्चा की गयी। चर्चा के विषय इस प्रकार रहे :

1. कृषि क्षेत्र में देश के स्तर पर आये संकटों की वजह।
2. कृषि मूल्य निर्धारण नीति में खामियां व सुधार की आवश्यकताएं।
3. छोटे व मानसून आधारित किसान का भविष्य व उससे संबंधित क्षेत्र।
4. डॉ. एस. एम. स्वामीनाथन आयोग के भारत की कृषि के लिए सुझाव व हमारी भूमिका।

5. ग्रामीण कृषि क्षेत्र में योग्य शिक्षा की कमी के कारण बढ़ती समस्याएं।
6. कृषि के क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव के लिए कार्यक्रम की जरूरत व स्वरूप।

इन विषयों पर विस्तार से चर्चा हुई। इस कार्यक्रम में सत्रों से संबंधित प्राथमिक भूमिका *सुधाकर जाधव, जयदीप हर्डिकर, श्रीकांत बारहाते, अमिताभ पावडे, प्रा. नूतन मालवी* ने रखी। खुली चर्चाओं के दरमियान महत्त्वपूर्ण सुझाव रखे गये।

प्रमुख सहभागी साथियों में *डॉ. बाबा आढाव, सुभाष वारे (पुणे), राजेन्द्र भिसे (मुंबई), संजय कोल्हे (अमरावती), शैआन जोसेफ (केरल), सियाराम साहू (छत्तीसगढ़), महेश जाखड़ (राजस्थान), राजेन्द्र कुम्भज (राजस्थान), नीता बहन (गुजरात), टीआरएन प्रभु (केरल), विनोद सिंह (उत्तर प्रदेश), सुदाम पवार (वर्धा), सी.एस.मैथ्यु (केरल), शेख हुसैन (मुंबई), महेन्द्र धावडे (नागपुर)* आदि ने अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया और समस्या का विश्लेषण किया।

कार्यक्रम संयोजक अविनाश काकड़े ने समारोह में हुई चर्चा को एक सूत्र में रखने की भरसक कोशिश की।

कार्यक्रम का शुभारंभ वर्धा जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष *प्रशांत गुजर* द्वारा प्रस्तुत क्रांति गीतों से हुआ। समारोप के दौरान अध्यक्ष *महादेव विद्रोही* व सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष *जयवंत मठकर* जी ने चर्चा के परिणामस्वरूप निकली बातों को आगे अधिक व्यापक करने की जरूरत पर जोर दिया व इस कार्य को आगे बढ़ाने को लेकर आश्वस्त किया।

सम्पूर्ण कार्यक्रम की अध्यक्षता सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष माननीय महादेव भाई विद्रोही ने की। कार्यक्रम का सूत्र संचालन सर्व सेवा संघ के आन्दोलन समिति के संयोजक अविनाश काकड़े ने किया।

सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष मा. जयवंत मठकर जी ने सहभागी साथियों का स्वागत व स्थानीय व्यवस्था का नियोजन किया।

सर्व सेवा संघ के महामंत्री शेख हुसैन ने परिसंवाद में सहभागी साथियों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया।

'हम होंगे कामयाब' के सामूहिक स्वर के साथ राष्ट्रीय परिसंवाद का समापन किया गया।

–अविनाश काकड़े

संयोजक, आंदोलन समिति, सर्व सेवा संघ
मुख्य प्रेरक, किसान अधिकार अभियान, वर्धा

का स्वामिनाथन आयोग कह रहा है। आयोग यह कहता है कि किसान को खर्चे पर 50 प्रतिशत का मुनाफा जोड़कर दाम देना चाहिए। का खेती में काफी दखल बढ़ गया है, इससे कृषि की जो स्वायत्तता है उसपर क्या प्रभाव पड़ेगा? और, कृषि की स्वायत्तता ही मजबूत के लिए जो संस्थाएं हैं, जैसे कृषि विद्यापीठ, भारतीय कृषि अनुसंधान आदि इन संस्थाओं में हर तरह के संशोधन प्रायः बंद कर दिये

गये हैं। हमें हरित क्रांति (1970) के समय इन संस्थाओं से काफी मदद मिली। अधिक ऊपज वाली बीजें भी बनायी गयीं व सरल जाति (स्ट्रेट लाइन) में बनायी गयीं, जिससे किसान अपने फसल से ही अपना बीज निकाल कर इस्तेमाल करें। जैसे गेहूं, धान, मूंग, उड़द, मूंगफली, कपास, सरसो आदि। किन्तु 1980 के बाद शंकरित बीजों को प्रोत्साहित किया गया, तब से भारत में देशी बीज कंपनियों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों का बड़ा हस्तक्षेप शुरू हो गया और किसान बीज के मामले में गुलाम हो गया। शंकरित बीजों की ऊपज बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद की खपत भी बढ़ानी पड़ी तो फसल में बीमारियां भी आयीं और कीटनाशक दवा का प्रभाव बढ़ता गया एवं कंपनियों का गुलाम हम होते गये। उत्पादन तो बढ़ा लेकिन मुनाफा नहीं बढ़ा और कर्ज बढ़ गया। इसी बात को जिन्हें हम हरित क्रांति का प्रणेता कहते हैं डॉ. स्वामीनाथन, उन्होंने ही किसान आयोग की रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख किया है कि 'खेती का विकास से कितना उत्पादन बढ़ता है, इसे न मापा जाय बल्कि किसान की आमदनी कितनी बढ़ती है इससे मापा जाय।'

प्रश्न : हमलोग तो मूलतः ग्रामस्वराज्य से जोड़कर ही किसान आंदोलन को देखते हैं। अभी जो किसान आंदोलन हो रहे हैं उससे ग्रामस्वराज्य को कितनी मदद मिलेगी।

उत्तर : भारत में लोग आज भी 50-60 प्रतिशत खेती पर निर्भर हैं। जब हम स्वतंत्र हुए थे तो 80 प्रतिशत लोग खेती पर निर्भर थे। उस समय देश की आबादी 40 करोड़ थी ते 32 करोड़ लोग खेती पर थे। आज देश की आबादी 125 करोड़ है और 50-60 प्रतिशत यानी 70 करोड़ लोग खेती पर हैं। यानी कि खेती पर तो लोग दोगुने हो गये हैं। जब हम स्वतंत्र थे तो हमारी राष्ट्रीय (जीडीपी) से कृषि का हिस्सा 50 प्रतिशत था, जो कि अब 12-15 प्रतिशत ही है। जबकि हमारे किसानों उत्पादन काफी बढ़ाया है। ऐसा इसलिए हुआ है कि हमारे देश की आय ने सेवाक्षेत्र का हिस्सा 60 प्रतिशत हो गया, पर हमने एकबार वेतन में वृद्धि की किन्तु कृषि उत्पादन में हमने उतने दाम बढ़ने नहीं दिये। इसे आधार मानकर कुछ अर्थशास्त्री और राजनेता यह कहते हैं कि कृषि पर आत्मनिर्भरता कम करनी होगी और उन्हें शहरों में लाना होगा। पर क्या शहरों में रोजगार उपलब्ध है? हमारे देश में अब यह कहा जा रहा है कि अमेरिका जैसी खेती होनी चाहिए। अमेरिका में 3 प्रतिशत लोग भी खेती पर नहीं हैं। 10-20 हजार एकड़ की खेतियां हैं। मशीन से खेती होती है, फिर भी सरकार की तरफ 17-20 विलियन डॉलर की किसानों को सब्सिडी दी जाती है। तो गांधी, विनोबा और जेपी के देश में, जहां पूंजी की कमी है परंतु श्रम-शक्ति विपुल है, वैसे देश में यंत्रों की खेती को सब्सिडी देने के बजाय पशु व श्रम-शक्ति को सब्सिडी देकर हमारी स्वदेशी खेती को क्यों नहीं जिन्दा रखना चाहिए। इसी कोशिश में ग्रामस्वराज्य तक पहुंचने का रास्ता खुलता है।

प्रश्न : कुछ दिन पहले केन्द्र के एक मंत्री ने तंज कसते हुए कहा कि किसानों का कर्ज माफ करना फैशन हो गया है। आप इस पर क्या कहना चाहेंगे?

उत्तर : मैं मानता हूं कि कर्जमाफी हर सवाल का जवाब नहीं है, फिर कर्जमाफी को बहुत जरूरी मानता हूं। कर्जमाफी करने के बाद में किसान को कर्ज वापसी की ताकत देना सरकार की नीतियों में बदलाव से ही संभव होगा। ये दोनों चीजें राज्य सरकार के अधिकार में नहीं हैं। यह केन्द्र सरकार के अधिकार में है, इसलिए केन्द्र सरकार की ही यह जिम्मेवारी बनती है। हमारे संविधान के अनुसार खेती राज्य का विषय है किन्तु खेती से संबंधी निर्णय लेने का हकदार सिर्फ केन्द्र सरकार है। उदाहरण स्वरूप समर्थन मूल्य का निर्धारण करना तथा घोषणा करना केन्द्र सरकार के अधिकार में है। आयात-निर्यात, विश्व व्यापार यह भी केन्द्र सरकार के अधिकार में है। मुद्रा प्रसार, कर्ज देना, नोट छापना यह भी केन्द्र के अधिकार में है। इसलिए कर्जमाफी करना भी केन्द्र सरकार की जिम्मेवारी है। परन्तु मोदी जी ने कर्जमाफी को राज्य की ओर धकेल कर किसान समस्याओं का निदान न कर किसानों के साथ मजाक किया है। और, इस पृष्ठभूमि पर हमारे देश के उपराष्ट्रपति (वेंकया नायडू) यह विचार रखते हैं कि 'कर्जमाफी यदि फैशन है तो यह किसानों के जख्मों पर नमक छिड़कने जैसा है।'

प्रश्न : अभी जो आपने सर्व सेवा संघ से मिलकर किसानों का जो दो दिवसीय सम्मेलन किया है, यह साझेदारी कितनी दूर चलेगी और एक संगठित शक्ति के रूप में उभरेगी?

उत्तर : मुझे ऐसा लगता है कि सर्व सेवा संघ को गांधी, विनोबा और जेपी के विचारों को जिन्दा करने के लिए जो गांव में अभी असंतोष है उसको संगठित करके सरकार पर नीतियां बदलने के लिए दबाव डालने की जिम्मेवारी लेनी चाहिए। मैंने तो सेवाग्राम आश्रम में गांधीवादियों से विनती की थी, जो आपके माध्यम से फिर दोहराना चाहता हूं कि गांधी ने साबरमती क्यों छोड़ा था, यह प्रण कर छोड़ा था कि गोरे जब तक वापस नहीं होंगे तब तक गांधी वापस नहीं लौटेंगे। सेवाग्राम में ही गांधी काम करते रहे और 70 साल बाद अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हुए। किन्तु 70 साल जिन लोगों ने देश में राज्य किया वह सब अंग्रेज बनकर ही राज्य किया है। मेरी यह विनती है कि यह सब गांधीवादियों को सेवाग्राम से साबरमती तक की यात्रा निकालनी चाहिए और इसकी घोषणा होनी चाहिए—'काले अंग्रेज की गुलामी से स्वतंत्रता।' गांव-गांव में जाकर लोगों से संवाद कर जुलूस में आग्रह करना चाहिए। और, फिर साबरमती में बैठकर सब विचार करें कि हम इस गुलामी से निजात पाने के लिए क्या करें? ❑

भारतीय कृषि : समस्या और समाधान

❑ गिरिजा सतीश

गांव में विकास नहीं–शहरों की ओर पलायन : भारत में लगभग 5 लाख गांव हैं और लगभग 60% आबादी गांवों में ही रहती है। गांव के विकास बिना देश का विकास नहीं हो सकता। हम कह सकते हैं कि पंचवर्षीय योजनाओं के बावजूद ग्रामीण विकास उपेक्षित ही रहा है क्योंकि सिंचाई के साधनों में इजाफा नहीं हुआ, बिजली का अभाव है और कृषि उत्पादनों का सही मूल्य किसानों को नहीं मिलता है। जो किसान केवल खेती पर निर्भर हैं और उनके परिवार में कोई नौकरी नहीं करते हों या बाहर के शहरों में नहीं कमाते हों तो उनका गुजर-बसर काफी गरीबी में होता है। उनकी स्थिति किसी चतुर्थवर्गीय कर्मचारी से भी बदतर हैं। आखिर ग्रामीण विकास योजनाएं गांवों में क्यों नहीं उतर पाती हैं? इसका मुख्य कारण यह है कि ऐसी योजनाओं को दिल्ली या राज्य की राजधानियों में बनाया गया और उन्हें गांवों में लागू कर दिया गया। गांव के लोगों की सहभागिता, स्वतंत्रता और पंचायतीराज संस्थाओं के सशक्त हुए बिना इन योजनाओं से किसी अच्छे परिणाम की उम्मीद करना बेमानी है।

कृषि, उद्योग और रोजगार : पूरी दुनिया में कृषि और डेयरी उद्योग घाटे में चलते हैं। इन्हें जिन्दा रखने के लिए अलग-अलग देश की सरकारें किसानों की मदद करती हैं। यूरोप और अमेरिका में एक-एक किसान के पास 100 हेक्टेयर से अधिक जमीन होती है और उसमें भी खेती करने के लिए मशीन का इस्तेमाल होता है। 100 हेक्टेयर जमीन में खेती करने के लिए मुश्किल से चार-पांच लोगों की जरूरत पड़ती है। बड़े-बड़े डेयरी फार्म होते हैं। स्वचालित और आधुनिक मशीनों के द्वारा दूध उत्पादन से लेकर दूध बिक्री की व्यवस्था होती है। इसके बावजूद भी वहां सरकार प्रति किसान प्रति हेक्टेयर जमीन या प्रति पशु को आधार मानकर नकद अनुदान देती है।

भारत में कृषि की स्थिति बिलकुल अलग है। औसतन एक किसान के पास दो से पांच एकड़ जमीन भी उपलब्ध नहीं है। सरकार से नकद अनुदान नहीं मिलता। कृषि लाभप्रद नहीं होने के कारण किसान कर्ज में फंसते जाते हैं। कर्ज के बोझ से दबे किसान आत्महत्या कर लेते हैं और यह संख्या बढ़ती जा रही है। सरकार कहती है कि किसानों के अनुदान की योजनाएं हैं, लेकिन ये योजनाएं पूर्णतः निष्प्रभावी हैं। उदाहरण के लिए किसान समूह बनाकर स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना के तहत बैंक से ऋण लेते हैं तो ऋण के साथ अनुदान उपलब्ध होने का भी प्रावधान है। लेकिन यह योजना सरकारी जटिलताओं में फंसकर निष्प्रभावी हो गयी है। शायद ही किसी किसान को इससे फायदा हुआ हो। महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना के तहत किसानों के लिए शायद ही कोई सिंचाई संसाधन उपलब्ध हुआ है। सिंचाई विभाग की शायद ही कोई योजना सफल होती है और उससे किसानों की जमीन सिंचित होती है। कम मूल्य पर या निःशुल्क बीज वितरण समय पर नहीं होने के कारण इससे कोई फायदा नहीं होता। आय वृद्धि के लिए बैंक से ऋण/सरकारी अनुदान के तहत गाय, भैंस, बकरी, सूअर आदि पशु दिये गये, लेकिन किसी व्यक्ति की आमदनी नहीं बढ़ी। गांव के परंपरागत उद्योग समाप्त हो गये और अब उनका स्थान बड़ी-बड़ी कंपनियों ने ले लिया है। गांव से लोग पलायन करके बड़े-बड़े शहरों में काम की तलाश में भटक रहे हैं। कृषि और डेयरी पर पूर्ण निर्भरता से गांव का विकास नहीं हो सकता। इस पर लोग किसी तरह जिन्दा रह सकते हैं। देश में बिजली की स्थिति बहुत ही दयनीय है। किसान को बिजली के साथ-साथ डीजल इंजन भी रखना पड़ता है, जो लागत खर्च को काफी बढ़ा देता है।

सरकार बैंक के द्वारा जो कर्ज और अनुदान देती है, निःशुल्क या अनुदानित बीज-खाद वितरण करती है, किसान क्लबों के मार्फत किसान क्रेडिट कार्ड देती है, सिंचाई साधनों के लिए ऋण/अनुदान देती है—इन योजनाओं को बंद करने की आवश्यकता है। सरकार प्रति वर्ष प्रति किसान उसके कृषि योग्य जमीन में फसल के आधार पर उसे नकद अनुदान दे। इसका आधार होना चाहिए कि कितनी जमीन में वह प्रथम फसल, द्वितीय फसल तथा तृतीय फसल करता है। इसकी गिनती के आधार पर उसे नकद अनुदान मिलना चाहिए। किसी भी पशुपालक के पास कितने दुधारू गाय-भैंस हैं, इसके आधार पर उसे वार्षिक अनुदान मिलना चाहिए। इसके साथ जन-वितरण प्रणाली, आंगनबाड़ी, मिड-डे मील की योजनाओं को भी बंद करने की जरूरत है। इसके एवज में किसान और ग्रामीण लोगों को प्रतिवर्ष उत्पादन एवं कार्य अनुदान दिया जाये।

प्रखंड और जिला स्तर पर थर्मल पॉवर प्लांट उस क्षेत्र की जरूरत के अनुसार बैठाया जाए और संपूर्ण क्षेत्र में 24 घंटे बिजली आपूर्ति सुनिश्चित की जाए। प्रखंड और जिला स्तर पर विद्युत प्रबंधन, वितरण और उत्पादन की जिम्मेवारी जिला परिषद, म्युनिसिपल कारपोरेशन, प्रखंड/पंचायत समिति, स्वैच्छिक संस्थाएं या छोटी कंपनियों या व्यक्तियों को दिया जाना चाहिए। गांव से लेकर जिला स्तर तक की विद्युत प्रबंधन समितियां वहां के नागरिकों को मिलाकर बनायी जाए। जिला प्रबंधन समिति प्रखंड को बिजली बेचेगी और प्रखंड गांव को। गांव की समितियां हर घर को बिजली देगी और उससे किराया लेगी। राज्य सरकार यह सुनिश्चित करे कि प्रत्येक जिला को प्रति माह वह कितनी बिजली किस समय आपूर्ति करेगी। इसके लिए सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि वह गांव या शहरों में 24 घंटा पर्याप्त बिजली की आपूर्ति करे। बिजली का दर राष्ट्रीय या प्रांतीय स्तर पर निर्धारित नहीं किया जाए। दर का निर्धारण गांव, प्रखंड और जिला स्तर की कमेटियां अपने लागत के आधार पर निर्धारित करेंगी।

प्रखंड स्तर पर बड़े उद्योगों के सहायक उद्योग या उनके शाखा उद्योग शुरू किये जाएं, जिससे कि प्रत्येक परिवार से एक व्यक्ति को रोजगार दिया जा सके। मशीनीकरण उसी हद तक किया जाए, जिस हद तक कृषि के अलावा प्रत्येक घर से एक व्यक्ति को रोजगार

मिले, भले ही उसका मासिक वेतन आज के मूल्यों के आधार पर पांच या सात हजार रुपये ही क्यों न हो, कृषि से कोई भी परिवार भोजन के मामले में स्वावलंबी हो सकता है। अन्य जरूरतों के लिए उसे किसी उद्योग या सेवा में स्थानीय स्तर पर काम करने की जरूरत पड़ेगी।

सिंचाई के साधन और कृषि विकास : कृषि के लिए सिंचाई आवश्यक है। भारत में कई जगहों पर भूगर्भ जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है और कई जगहों पर बहुत ही कम। वर्षा असमय और अनियमित होती है। कभी-कभी वर्षा ऋतु में भी बारिश बहुत कम होती है। वर्षा के भरोसे कोई अच्छी फसल नहीं ली जा सकती। कृषि के लिए सिंचाई की व्यवस्था बहुत जरूरी है। हम पहले कह आये हैं कि 24 घंटा बिजली की आपूर्ति होने पर किसान सिंचाई की व्यवस्था स्वयं कर सकते हैं। सिंचाई के लिए बिजली की आपूर्ति न्यूनतम मूल्य पर होनी चाहिए। किसान के साथ सबसे बड़ी समस्या उसके उत्पादन का उचित मूल्य नहीं मिलना है। जिस समय उत्पादन होता है, उस समय वस्तु का मूल्य बहुत घट जाता है और किसान को लागत मूल्य भी उपलब्ध नहीं हो पाता। समय पर वर्षा का न होना, आंधी-तूफान, कीड़े-मकोड़े का प्रकोप, अतिवृष्टि से फसल के नुकसान की पूर्ति किसान नहीं कर पाते।

जब भी कुछ कृषि उत्पादों के मूल्य कुछ बढ़ते हैं तो देश में हो-हंगामा मचने लगता है। आखिर कृषि उत्पादनों और दूध का मूल्य इतना तो रहना ही चाहिए कि किसान को लाभ हो और तभी वो खेती की ओर वापस लौट सकते हैं। सरकार जो समर्थन मूल्य निर्धारित करती है, वह लागत मूल्य के आधार पर निर्धारित होना चाहिए।

सिंचाई के लिए जो बड़े-बड़े चेकडैम बनाये जाते हैं, उनका उचित रखरखाव और प्रबंधन नहीं होने के कारण वे नाकामयाब हो जाते हैं। बड़ी सिंचाई परियोजनाओं की आवश्यकता नहीं है। नदी और नालों में कम ऊंचाई का पक्का बांध देने की आवश्यकता है। इससे भूगर्भ जल में भी वृद्धि होगी और किसान आसपास की जमीन को सिंचित भी कर सकेंगे। सिंचाई संसाधनों के निर्माण पर किसानों को बिना किसी भेदभाव के 75-80% अनुदान मिलना चाहिए। अगर वो कुआं, फार्मपौंड, चेकडैम अपनी जमीन में बनाना चाहते हों या सिंचाई के लिए पंपसेट, बिजली मोटर, पाइप आदि खरीदना चाहें तो उन्हें 75-80 फीसदी अनुदानित मूल्यों पर ये चीजें उपलब्ध होनी चाहिए। क्योंकि कृषि किसानों के लिए एक घाटे का व्यवसाय है और उसके लिए पर्याप्त अनुदान आवश्यक है। पशुओं से खेती करना अनार्थिक होता है। अगर किसान उन्नत मशीनों का इस्तेमाल करना चाहे तो उसपर सरकार द्वारा अनुदान मिलना चाहिए।

सिंचाई के लिए कुआं, तालाब, चेकडैम आदि बनाने के लिए मशीनों का इस्तेमाल किया जा सकता है, चाहे वह राशि मनरेगा की हो या अन्य किसी योजना की। ऐसा करने से कम लागत में समुचित सिंचाई संसाधन बन पायेंगे। तालाब, कुएं या चेकडैम की गहराई पर्याप्त की जा सकती है। इससे भूगर्भ में जल संग्रह की क्षमता बढ़ेगी और कम जमीन में भी अधिक जल संग्रह हो सकता है। आज जमीन के अभाव के कारण भी किसान चेकडैम वगैरह नहीं बनाना चाहते हैं। इस तरह कम जमीन में भी ज्यादा क्षमता वाले सिंचाई संसाधन बनेंगे।

कच्चे कृषि उत्पादनों को संग्रह करने के लिए प्रत्येक प्रखंड में कोल्ड स्टोरेज बनाया जाना चाहिए। पक्के उत्पादनों जैसे चावल, गेहूं, दलहन, तेलहन आदि का संग्रह किसान अपने घर में भी कर सकते हैं और इसके लिए पक्का घर बनाने हेतु किसानों को सरकार 75% अनुदान दे। सामूहिक अनाज बैंक निर्माण करने से उसमें कई प्रबंधकीय समस्याएं खड़ी होती हैं और वह उपयोगी भी नहीं हो पाता है।

अलग-अलग क्षेत्रों में वहां के मौसम और भूमि के अनुकूल जिन वस्तुओं का उत्पादन हो सकता है, उन क्षेत्रों का चयन कर वहां वैसी वस्तुओं की मार्केटिंग सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए। उदाहरण के लिए जहां आलू का उत्पादन होता है, उन क्षेत्रों से दूर-दराज के शहरों में आलू ले जाने के लिए परिवहन की व्यवस्था में सरकार सहयोग करे और उचित ढंग से पैकिंग और परिवहन करने के लिए संसाधन उपलब्ध करवाने की व्यवस्था हो। फल और सब्जियों का निर्यात करने के पैकेट्स विकसित किये जायें। ऐसे क्षेत्रों में कृषि वैज्ञानिकों का प्रावधान हो, जो किसानों को बहुत ही कम खर्च में तकनीकी सलाह दे सकें। इसी तरह दूध उत्पादन के लिए भी क्षेत्रों का विकास किया जाए। इसके लिए गाय-भैंस खरीदने, उन्हें रखने के लिए घर बनाने में सरकार अनुदान दे। प्रखंड स्तर पर छोटे-छोटे चिलिंग प्लांट बैठा कर दूध को शहरों में भेजने की परिवहन व्यवस्था बहुत ही कम मूल्य पर की जानी चाहिए।

कृषि आधारित उद्योग प्रखंड या जिला स्तर पर बैठाए जाएं। यह किसी बड़ी कंपनी के साथ साझा किया जा सकता है। मध्यवर्ती उत्पादन प्रखंड या जिला स्तर पर किया जा सकता है। क्षेत्र विशेष में विशेष कृषि उत्पादनों को बढ़ावा देने और प्रखंड या जिला स्तर पर मध्यवर्ती उत्पादन के उद्योग बैठाने के लिए छोटे, मध्यम एवं बड़े उद्यमियों को सरकार सहायता प्रदान करे।

किसान संगठनों की जरूरत : आज देश के अनेक हिस्सों से किसानों के बीच असंतोष की खबरें आ रही हैं। कुछ दिन पहले तमिलनाडु के किसानों ने दिल्ली के जंतर-मंतर पर लंबे समय तक धरना दिया था। मध्य प्रदेश में किसानों का आक्रोश सामने आया है। झारखंड में एनटीपीसी की कोयला खनन परियोजनाओं में इनकी जमीन जा रही है और विस्थापन/मुआवजे को लेकर वहां भी काफी गुस्सा है। अनेक जगहों से समाचार आते हैं कि कम कीमत मिलने के कारण किसानों ने अपनी फसल खुद ही नष्ट कर दिया। इस वर्ष चम्पारण सत्याग्रह के 100 वर्ष पूरे हुए हैं और हमें याद रखना होगा कि वह घटना किसानों की समस्या पर केन्द्रित थी। यह दुखद है कि भारतीय किसान खेती छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं। आज इनके आर्थिक हितों और स्वाभिमान को सुरक्षा मिलनी चाहिए। अब किसानों को संगठित होकर आवाज बुलंद करने और अपनी शक्ति का परिचय देने की जरूरत है। यदि ये एकजुट होकर दिल्ली या किसी भी बड़े शहर में सब्जी और दूध की आपूर्ति रोक दें तो क्या होगा? इसलिए यह सरकार और समाज की जिम्मेवारी है कि किसानों की समस्या पर ध्यान दे और उसके समाधान का प्रयास करे ताकि हमारा देश समावेशी विकास की ओर बढ़ सके। ❑

किसानों की समस्याओं के समाधान पर्यावरण की रक्षा से जुड़ें

❑ भारत डोगरा

पिछले 6 दशकों से सरकारों के लिए किसान सिर्फ एक नारे की तरह रहा है। कृषि और किसान सरकार की प्राथमिकता में कम ही रहे हैं, जबकि आज भी देश की बड़ी आबादी की आजीविका कृषि पर आधारित है। ऐसे में सवाल है कि किसान, कृषि और पर्यावरण के विकास के बारे में विचार क्यों नहीं किया जाता? कृषि में इतनी शक्ति है कि अगर कृषि को सही तरीके से विकसित किया जाए तो आज किसान खुशहाल हो सकता है। इन्हीं पहलुओं पर केन्द्रित प्रस्तुत आलेख। **–सं.**

हाल के समय में सरकारों ने किसानों को कुछ राहत देने के प्रयास अपने स्तर पर किए हैं, पर इसके बावजूद किसानों में असंतोष अनेक स्थानों पर तेजी से बढ़ रहा है। इस स्थिति में हमें वैकल्पिक सोच पर ध्यान देना होगा। इस सोच का मूल आधार यह है कि किसानों की समस्याओं के समाधान को पर्यावरण की रक्षा से जोड़ा जाए। इस वैकल्पिक सोच के दो पक्ष महत्त्वपूर्ण हैं।

पहला पक्ष तो यह है कि जिन गांवों में हरियाली लाने तथा पानी व नमी के संरक्षण की व्यवस्था टिकाऊ व संतोषजनक ढंग से हो जाती है, वहां किसानों व पशुपालकों की कठिनाईयां काफी हद तक कम हो जाती हैं। हरियाली के लिए स्थानीय प्रजातियों के पेड़ों को पनपाना जरूरी है जिनकी जल व मिट्टी संरक्षण की क्षमता अच्छी हो व जो चारा व कई तरह की लघु वन-उपज दे सकें। जल संरक्षण के लिए परंपरागत व आधुनिक विज्ञान दोनों की सहायता से बहुत से उपयोगी कार्य किए जा सकते हैं। इन दोनों कार्यों के लिए बजट को कई गुणा बढ़ाना चाहिए व यह गांवों में रोजगार सृजन का ऐसा क्षेत्र बनना चाहिए, जिससे गांवों व कृषि का टिकाऊ विकास सुनिश्चित होगा।

दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि महंगी व निर्भरता वाली तकनीकों के स्थान पर किसानों को आत्म निर्भरता बढ़ाने वाली सस्ती तकनीकें मिलनी चाहिए। विशेषकर बीज के मामले में आत्म निर्भरता बढ़ाना, किसानों द्वारा बीजों का आपसी आदान-प्रदान बढ़ाना, लुप्त हो रहे बहुत जैव-विविधता वाले परंपरागत बीजों का संरक्षण बहुत जरूरी है। पानी की कम जरूरत वाली व अच्छे पोषण वाली फसलों व फसलों की किस्मों का परंपरागत ज्ञान बहुत उपयोगी है। ऐसी फसलों का चुनाव होगा व गांव में नमी-संरक्षण बना रहेगा तो सूखे के वर्ष में भी बहुत संकट नहीं आएगा। अत्यधिक जल-दोहन व उपयोग के स्थान पर नमी बनाए रखना अधिक जरूरी है। तकनीक सस्ती व आत्म-निर्भर होने के साथ ऐसी होनी चाहिए जो पर्यावरण रक्षा के अनुकूल हो, जिससे मिट्टी का प्राकृतिक उपजाऊपन न बिगड़े, व जिससे मित्र कीट-पतंगों व पक्षियों को भी कोई क्षति न हो।

इस तरह की खेती से किसानों का खर्च कम होगा व साथ में प्रतिकूल मौसम को सहने की उनकी क्षमता बढ़ेगी। इसके साथ सभी गांवों में खाद्य सुरक्षा के हब होने चाहिए जहां सार्वजनिक वितरण या राशन केन्द्र, आंगनवाड़ी, मिड-डे मील का खाना पकाने का स्थान व असहाय लोगों की रसोई सब एक साथ स्थापित होने चाहिए। इनके लिए जरूरी सभी खाद्य जैसे अनाज, दलहन, तिलहन, सब्जी आदि उसी गांव या पड़ोसी गांव के किसानों से उचित दाम पर खरीदने चाहिए। यह सारा कार्य गांव की महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों को सौंपना चाहिए। इस तरह खाद्य सुरक्षा व आजीविका की रक्षा दोनों साथ-साथ जुड़ेंगे।

इसी स्थान पर किसानों की उपज के स्थानीय खरीद केन्द्र व भंडारण केन्द्र खुलने से किसानों को अपनी उपज की बिक्री के लिए दूर नहीं जाना पड़ेगा। बल्कि गांव में या उसके नजदीक ही उनकी उपज का एक बड़ा हिस्सा बिक सकेगा। इस तरह किसानों, विशेषकर छोटे किसानों की बिक्री का एक बड़ा हिस्सा इसी हब में स्थित राशन की दुकान, आंगनवाड़ी, मिड-डे मील की रसोई आदि में उपयोग होगा। इस तरह दूर-दूर बिक्री के लिए फसल ले जाने व फिर गांव में राशन, पोषण सामग्री आदि दूर-दूर से लाने में जो बहुत-सा अपव्यय होता है वह बच सकेगा।

गांधीजी की सोच के अनुरूप गांवों में कुटीर उद्योगों जैसे कताई, बुनाई, खाद्य प्रसंस्करण आदि को प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके लिए विविध तरह के अनाजों की परंपरागत प्रजातियां उपयोगी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत व आधुनिक दोनों कुटीर उद्योगों, सूचना तकनीक व शाश्वत ऊर्जा स्रोतों को बढ़ाने के लिए सरकार को विशेष सहायता देनी चाहिए। इस तरह ग्रामीण आजीविका में विविधता आएगी। मनरेगा को अधिक सशक्त करना चाहिए तथा इसमें मजदूरी का भुगतान समय पर होना चाहिए। किसानों के लिए ब्याज की दर कम होनी चाहिए। आपदाओं के समय सहायता उचित समय पर पहुंचनी चाहिए। विभिन्न प्रयासों को अपनाकर किसानों व अन्य गांववासियों की समस्याओं को बहुत कम किया जा सकता है। ❑

'बा'

घर बुला रहा था

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं।–संपा.

मन उचट रहा था। डरबन में घुसने के पहले से अब तक जितनी दुर्घटनाएं घटी थीं, वे कस्तूरबा के दिमाग में किसी डरावनी तस्वीर की तरह अचानक उभरकर सजीव होने लगती थीं। मन अनायास आशंकित हो उठता था, अब आगे क्या...? प्रश्नचिह्न की घुंडी में बच्चों से लेकर मोहनदास तक सब सिमट जाते थे। हालांकि मोहनदास देखते-देखते डरबन के सम्मानित व्यक्ति बन गये थे। जब से कस्तूर डरबन आयी थी बच्चों की पढ़ाई को लेकर दिमाग में सवाल ही सवाल थे। मणिलाल नौ साल का होने को आया था। तीनों बड़े बच्चे अपनी उम्र के दूसरे बच्चों से बहुत पीछे थे। यह सोचकर ही कस्तूरबा की धड़कनें बढ़ जाती थीं। ये बच्चे आखिर क्या करेंगे? मोहनदास के लिए देश से बुलावे आ रहे थे। वे कहते थे अपने देश को भी तो देखो। डरबन ने ऐसा क्या कर दिया कि अपना देश ही भूल गए?

कस्तूरबा का मन भी स्वजनों से मिलने के लिए तड़पता रहता था। डरबन में जन्मे दोनों बच्चों को संबंधियों को दिखाने का मन में बाल सुलभ उतावलापन था। जहां तक बड़े बच्चों को पढ़ाने की बात थी सिवाय मोहनदास के द्वारा पढ़ाने के दूसरा कोई इंतजाम नहीं था। वह उसकी नजर में अपर्याप्त था। कई बार उसे लगता था, विदेश चाहे जितना भी आकर्षित करता हो, या सुख-सुविधा हो, पर वह स्वदेश की तरह हांक नहीं लगाता कि चले आओ, तुम्हारी जगह खाली है, तो कुछ संभव है, मैं करूंगा। उस पुकार की कोई कब तक उपेक्षा करे, समय के साथ वह पुकार कितनी भी मद्धिम पड़ जाए पर उसकी भनभनाहट तो कभी खत्म नहीं होती। मोहनदास कई बरस विलायत में रहे थे पर सात समंदर पार से आने वाली पुकार इतनी मद्धिम नहीं पड़ी थी कि सुनाई न पड़े। उस गुन गुन धारा में शक्लें भी तैरती रहती थीं। उधर मोहनदास के साथ भी राजकोट और देश रस्साकशी कर रहे थे। कस्तूरबा का निमंत्रण तो पोरबंदर और राजकोट दोनों में था। 1901 में मोहनदास ने एकाएक तय किया कि सबको देश जाना है। डरबन जाने नहीं देना चाहता था। दादा अब्दुल्ला, उनके पूर्व मालिक, रोकने में सबसे आगे थे। इस बार मोहनदास निश्चय से टस से मस नहीं हुए। कस्तूरबा की इच्छा शक्ति और देश की पुकार पुरजोर थी। ऐवज में मोहनदास को उनका यह आग्रह मानना पड़ा कि जब भी डरबन बुलाएगा आना पड़ेगा। कस्तूरबा को आश्वासन देना अच्छा नहीं लगा। उधर बड़े भैया और बाकी घर वाले बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। कस्तूरबा के दिमाग में सबसे बड़ी प्राथमिकता थी बच्चों की पढ़ाई की समस्या का समाधान खोजना। लेकिन वह चुप थी, बड़ी मुश्किल से घर लौटने की सायत आयी थी। दावतें और विदाई समारोह चालू हो गये थे। उपहार दिये जाने लगे थे। सोने-चांदी और हीरे जवाहरात के

जेवरात दिये गये। कस्तूरबा को सोने का हार भेंट किया गया। यही बिन्दु था जहां से पति-पत्नी का सैद्धांतिक मतभेद चालू हुआ था।

उपहारों को ले जाकर एक मेज पर सजा दिया गया था। बा और बच्चों को उन उपहारों को देखकर गर्व का अनुभव हो रहा था। सबसे बड़ी खुशी की बात थी कि उसके पति व बच्चों के पिता का डरबन में कितना सम्मान था कि लोगों ने इतने कीमती उपहार भेंट किये थे। उन्होंने कभी सोचा नहीं था कि इतने कीमती उपहार दिये जायेंगे। लेकिन मोहनदास खामोश थे। वे रात-भर टहलते रहे थे। उनके सामने सबसे बड़ा सवाल था कि इतने कीमती जेवरों का वे क्या करेंगे? भेंट के समय इनकार करना भी संभव नहीं था। सब मित्र आहत हो जाते। लेकिन उन्हें अपने पास रखना और भी बड़ा अपराध होगा। सेवा के ऐवज में प्रतिदान, नैतिकता के विरुद्ध है। वैसे भी उनके, पत्नी और बच्चों के लिए उनका कोई उपयोग नहीं है। सादगी ही सबके जीवन का आदर्श है। रात-भर की माथापच्ची के बाद उन्होंने निर्णय लिया कि ये सब उपहार कांग्रेस के सिद्धांतों का सम्मान है। इसलिए दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के कल्याणार्थ नेटाल इंडियन कांग्रेस को ट्रस्ट के माध्यम से दे दिये जाने चाहिए। निर्णय पर पहुंचकर उन्हें राहत मिली। रात ही में ट्रस्ट बनाने के लिए सब कागजात तैयार कर लिये। अपने मित्र पारसी रुस्तमजी को ट्रस्ट का अध्यक्ष बनाया और अन्य कुछ विश्वसनीय साथियों को ट्रस्टी बना दिया।

अगले दिन सवेरे, मौका देखकर उन्होंने पहले हरिलाल और मणिलाल को बुलाया। उन्हें बात समझाने में मुश्किल नहीं आयी। बच्चे बा से बात करने के लिए राजी हो गये। हरिलाल ने कहा, अगर हमें जरूरत होगी तो हम स्वयं प्रबंध कर लेंगे, आत्मनिर्भरता सबसे बड़ा सुख है। बात मोहनदास को पसंद आयी। दोनों बच्चे कस्तूरबा के पास गए। वहां लाए। उनके आते ही मोहनदास ने कहा, 'इन उपहारों को वापिस कर देना चाहिए।' कस्तूरबा का मानना था, जब स्वजन प्रेम और सम्मान के साथ उपहार दें तो उसी भाव से स्वीकार करना चाहिए। वह विरोध के स्वर में बोली, 'आप यह क्या कह रहे हैं, यह अनैतिक है कि प्रेम से दिये गये उपहार वापिस कर दिये जाएं?'

'क्या यह अनैतिकता नहीं कि समाज सेवा की ऐवज में कीमती उपहार स्वीकार करें?'

'मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों न स्वीकार किए जाएं?'

'तुम इनका क्या करोगी?'

'मैं अपनी बहुओं के लिए रखूंगी।' कस्तूरबा ने तपाक से उत्तर दिया जो मां की दृष्टि से वाजिब था।

'बच्चे अभी छोटे हैं। इनके विवाह में अभी पर्याप्त समय है।' मोहनदास को जवाब देने में देर लगी।

बच्चों ने बीच में जड़ दिया, 'बा, हमें कुछ नहीं चाहिए।'

'तुम लोगों से किसने पूछा?' बा ने बच्चों को डपट दिया। मोहनदास से बोली, 'तुम मेरे बच्चों को साधु-संत बना रहे हो, पहले आदमी तो बनें।'

'हम अपने बच्चों के लिए ऐसी बहुएं नहीं चुनेंगे जिनके लिए जेवर ही सब कुछ हो।' मोहनदास ने अजीब-सा जवाब दिया, 'हम उन्हें हीरे जवाहरात देंगे? तुम मुझसे कहना, मैं हूं ना।'

क्या बहुओं को भी मेरी जैसी बनाओगे, यह सवाल उसके मुंह से निकलते-निकलते रह गया।

कस्तूरबा का शांत रहने वाला स्वर तनिक सख्त हो गया, 'तुम तो सब कुछ त्यागते जा रहे हो, हीरे कहां से लाओगे?'

'मैंने ट्रस्ट बनाने के लिए कागज तैयार कर लिए हैं।'

'तुमसे किसने कहा था?' उसकी आंखों से आंसू ढलक आए। 'तुम्हें मेरा सोने का हार देने का क्या हक था? जैसे तुमहारे उपहार हैं, वैसे वह मुझे मिला हुआ मेरा उपहार है।'

मोहनदास ने शांत बने रहकर कहा, 'यह उपहार तुम्हें मेरी सेवा के फलस्वरूप दिया गया है।' यह वाक्य उसे गर्वोक्ति की तरह ही नहीं लगा बल्कि अंदर तक चुभता चला गया।

वह जो संयम बनाए हुए थी टूट गया। रोते हुए कहा, 'तुम्हारी सेवा जग-जाहिर है, मेरी नहीं है। सेवा मैंने की या तुमने, क्या अलग-अलग है? मैं तुम्हारे लोगों के लिए रात-दिन खटती हूं, क्या वह सेवा नहीं?'

कस्तूर के तर्क ने एक क्षण के लिए मोहनदास को ला-जवाब कर दिया था।

हो सकता है कस्तूरबा ने खामोशी को स्वीकृति मान लिया हो क्योंकि जब मोहनदास डरबन से चले तो उसके हार सहित सब उपहार बैंक की तिजोरी में जा चुके थे। मोहनदास की विजय नहीं थी, उनकी जिद की विजय थी। कस्तूरबा खामोश हो गयी थी।

... क्रमशः अगले अंक में

महात्मा गांधी के प्रति

❑ डॉ. लतादास पाल

मेरे महान देश भारत के
पूजनीय महात्मा गांधीजी;
जग में
आपका बहुत है महत्त्वपूर्ण अवदान,
आप मानवता का हैं नाम,
सत्य, अहिंसा और स्वच्छता का
दे गये वरदान,
सारे देशवासियों के साथ
मेरा सश्रद्ध प्रणाम!!

हे महामानव!
आपकी जीवन स्मृतियां,
मैत्री-सतता प्रेम मानवता की ओर,
आपकी हजारों अमृत वाणियां,
मन में सुख, शांति, आनंद बहाया।
आपके बताये हुए कर्मयोग, प्रेरणा,
ऋद्धि, सिद्धि का दिशा बतलाया।

अब मेरा देश बदल रहा है,
आगे बढ़ रहा है, गौरव बढ़ाना होगा।
आज आपके चित्र के सामने खड़ी हूं,
मैं भारत की एक बेटी,
मेरी विनम्र प्रार्थना है
बेटियों की पूर्णता के
आशीर्वाद दीजिए,
बापूजी, आपको फिर से
एक बार आना चाहिए।

गतिविधियां एवं समाचार

नयी पीढ़ी के पास गांधीजी

19 से 25 अगस्त, 2017 को सात दिवसीय राज्य स्तरीय छात्र-युवा शिविर कस्तूरबा भवन, मौड़ीग्राम हावड़ा में गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नयी दिल्ली के तत्त्वावधान में तथा पश्चिम बंग गांधी शांति प्रतिष्ठान के सहयोग से आयोजित किया गया।

शिविर में पश्चिम बंग के पांच जिले से 52 छात्र एवं छात्राओं ने भाग लिया, जिसमें 4 एमएबीएड और 7 स्कूल की छात्राओं को छोड़कर शेष सभी कॉलेज की छात्राएं थीं। शिविर का मूल विषय था 'नतुन अजमेर काछे गांधीजी'।

उद्घाटन वरिष्ठ चिन्तक डॉ. सन्मथ नाथ घोष तथा अध्यक्षता वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता श्री विमलचन्द्र पाल ने की।

गांधीजी के बचपन से लेकर दक्षिण अफ्रीका, भारत प्रत्यावर्तन, सत्याग्रह आंदोलन, देश की आजादी आंदोलन में गांधीजी का अवदान, स्वाधीनता व स्वराज, गांधीजी का शिक्षा-दर्शन, साम्प्रदायिकता, शांति सेना आदि विषयों पर गहरी चर्चा हुई। डॉ. चित्तरंजन पाल, अध्यापक सत्यव्रत चौधरी, मानवेन्द्र मंडल, शंकर कुमार सान्याल, नारायण भाई, अध्यापक विजय सरकार, जयदेव जाना, गोपाल घोष आदि ने भी चर्चा में भाग लिया।

प्रार्थना, योगासन, सफाई, श्रमदान आदि विषयों पर चर्चा-गोष्ठी एवं खेल, सांस्कृतिक अनुष्ठान हर रोज के कार्यक्रम में शामिल रहा, जिसमें शिविरार्थियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। इस तरह से शिविर बेहद प्रेरणास्पद एवं सार्थक रहा।

शिविर का संचालन सर्व सेवा संघ तथा पश्चिम बंगाल गांधी शांति प्रतिष्ठान के मंत्री चंदन पाल ने किया।

–स. ज. प्रतिनिधि

विनोबा जयंती का आयोजन

युग पुरुष संत विनोबा भावे की 123वीं जयंती के अवसर पर 11 सितंबर, 2017 को प्रस्थान आश्रम, खानपुर, पठानकोट में कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ सर्वधर्म प्रार्थना एवं आर्य महिला कॉलेज, पठानकोट की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत भजनों से हुआ। इस अवसर पर ओबराये मॉडल स्कूल, खानपुर की छात्राओं ने देशभक्ति गीत प्रस्तुत किये। कार्यक्रम में गणमान्य नागरिकों, रचनात्मक कार्यकर्ताओं, शिक्षकों तथा बड़ी संख्या में विद्यार्थियों ने भाग लिया।

कार्यक्रम के मुख्य वक्ता आचार्यकुल के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष विनोद स्वरूप रहे। आपने बहुत प्रभावपूर्ण तरीके से अपनी बातें रखीं। यशपाल शर्मा ने अपने संबोधन में 'विज्ञान युग में धर्म' विषय पर मार्गदर्शन किया।

इस अवसर पर जत्थेदार सेवा सिंह, सतीश सैनी, संतोष महाजन, डीएन गुप्ता, वी. आर. गुप्ता, रोहित कोहली, सुशील, सरला अग्रवाल, कांत चौधरी, अनीता तुल्ली एवं काफी संख्या में नागरिक उपस्थित रहे।

अध्यक्षता तिलकराज शर्मा तथा संचालन बलदेवराज यदुवंशी ने की। **–यशपाल गुप्ता**

× × ×

सर्वोदय ग्राम स्वाराज्य समिति, मिर्जापुर द्वारा विनोबा जयंती 11 सितंबर, 2017 को मनायी गयी। *'सर्वधर्म प्रार्थना'* एवं *'वैष्णव जन तो तेनो कहिये'* से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। इस अवसर पर *'विनोबा एवं ग्रामस्वराज्य'* विषयक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। बतौर मुख्य वक्ता 'क्रेडा' के सचिव शमशाद भाई ने कहा कि विनोबाजी ने श्रीमदभागवत गीता का गहन अध्ययन किया था और यह ज्ञान उनके दैनिक जीवन में सहज झलकता था। विनोद भाई ने कहा कि देश की आजादी के लिए बापू के नेतृत्व में सत्याग्रह का बिगुल फूंका गया तो विनोबा सब कुछ छोड़कर बापू के साथ चल दिये। गांधीजी ने विनोबाजी को प्रथम सत्याग्रही घोषित कर दिया। इस अवसर पर प्रवचन, भाषण, गीत-भजन, श्रमदान तथा प्रीतिभोज का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम में मनोज कुमार पांडेय, मुन्नीलाल अग्रहरि, नुरुल इस्लाम, रमेश बहादुर सिंह, विनोद भाई आदि ने भाग लिया। **–विनोद भाई**

कविता

26 जनवरी - 15 अगस्त

❑ नागार्जुन

किसकी है जनवरी,
किसका अगस्त है?
कौन यहां सुखी है,
कौन यहां मस्त है?
सेठ है, शोषक है,
नाम गला काटू है?
गालियां सबकी सुनता है,
भारी थूक चाटू है
चोर है, डाकू है,
यह मक्कार है
कातिल है, छलिया है,
लुच्चा-लबान है
जैसे भी टिकट मिला
जहां भी टिकट मिला
शासन के घोड़े पर,
वो ही सवार है
उसी की जनवरी 26
उसी का पन्द्रह अगस्त है
बाकी सब दुखी हैं,
बाकी सब पस्त हैं।

कौन है खिला-खिला,
बुझा-बुझा कौन है?
कौन है बुलंद आज,
कौन आज मस्त है?
खिला-खिला सेठ है,
श्रमिक है बुझा-बुझा
मालिक बुलंद है,
कूली-मजूर पस्त है
सेठ यहां सुखी है,
सेठ यहां मस्त है
उसकी है जनवरी,

उसी का अगस्त है
पटना है, दिल्ली है,
वहीं सब जुगाड़ है
मेला है, ठेला है,
भारी भीड़-भाड़ है
फ्रिज है, सोफा है,
बिजली का झाड़ है
फैशन की ओट है,
सब कुछ उघाड़ है।
पब्लिक की पीठ पर,
बजट का पहाड़ है
गिन लो जी गिन लो,
गिन लो जी गिन लो
मास्टर की छाती में,
कै ठो हाड़ है।
गिन लो जी गिन लो,
गिन लो जी गिन लो
मजदूर की छाती में,
कै ठो हाड़ है।
गिन लो जी गिन लो,
गिन लो जी गिन लो
पत्नी की छाती में,
कै ठो हाड़ है।
गिन लो जी गिन लो,
गिन लो जी गिन लो
बच्चे की छाती में,
कै ठो हाड़ है।

महल आबाद है,
झोपड़ी उजाड़ है
गरीबों की बस्ती में,
उखाड़ है, पछाड़ है
धत् तेरी, धत् तेरी,
कुच्छो नहीं, कुच्छो नहीं
ताड़ का तिल है,
तिल का ताड़ है
ताड़ के पत्ते हैं,
पत्तों के पंख हैं
पंखों की ओट है,
पंखों की आड़ है
कुच्छो नहीं, कुच्छो नहीं
ताड़ का तिल है,
तिल का ताड़ है
पब्लिक की पीठ पर,
बजट का पहाड़ है

किसकी है जनवरी,
किसका अगस्त है
कौन यहां सुखी है,
कौन यहां मस्त है
मंत्री ही सुखी हैं,
मंत्री ही मस्त है
उसकी है जनवरी,
उसी का अगस्त है। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।